नामघरैया

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

नामघरैया

अतुलानंद गोस्वामी

अनुवाद

सत्यदेव प्रसाद

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-3621-5

पहला संस्करण : 2001 (शक 1923)

Original Title : Naamghariya (*Asamiya*)
Translation : Naamgharaiya (*Hindi*)

रु. 30.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ए-5, ग्रीनपार्क, नई दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित

भूमिका

सन् 1935 में जन्मे अतुलानंद गोस्वामी विगत चार दशकों से कहानियां लिखते रहे हैं। रचना-शैली की निजी विशिष्टता के कारण वे एक प्रतिष्ठित कहानीकार हैं। कहानीकार के रूप में उन्होंने कथावस्तु और वर्णन-शैली के क्षेत्रों में कोई नया प्रयोग नहीं किया। सरलता और निर्बाध भावावेग ही उनकी वर्णन-शैली की विशेषता है। उनकी कहानियों में सुगठित कथावस्तु एवं चरित्र, मूल्यों में द्वंद्व और विवेक अनवरत रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। 'हामदै पुलर जोन', 'पुलकेश बरुआ', 'बलीया हाती' इत्यादि कहानियां असमिया पाठक जगत में अत्यंत लोकप्रिय हैं। तीन दशकों तक केवल कहानियां लिखकर यश कमाने के बाद अतुलानन्द गोस्वामी ने सन् 1990 में 'नामघरिया' (नामघरैया) शीर्षक उपन्यास लिखा। इस उपन्यास ने भी उनकी कहानियों की तरह ही लोकप्रियता प्राप्त की। इस उपन्यास की कथावस्तु पारंपरिक नहीं है। 'नामघरैया' अर्थात नामघर (शंकरदेव प्रवर्तित वैष्णव मंदिर) के सेवक के जीवन पर लिखित प्रथम असमिया उपन्यास है।

'नामघरैया' उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार ने आधुनिक परिवेश में जीवन की एक लुप्त लय को पुनर्प्रतिष्ठित करने की चेष्टा की है। संघर्षों के बीच से 'नामघरैया' की जो तस्वीर उभरती है, उसका समाज-जीवन या जातीय जीवन आज आधुनिकता के भंवरजाल में निःशेष हो चुका है। उपन्यास सबसे पहले किस्तों में पत्रिका में प्रकाशित हुआ था और प्रत्येक किस्त ने उस समाज-जीवन के एक-एक विशेष पक्ष का उद्घाटन किया, जिसकी रक्षा नामघरैया करता रहा है।

'नामघरैया' एक चरित्रप्रधान उपन्यास है, जिसका नायक है—नामघरैया। वैष्णव परंपरा और मानवीय मूल्यों के वाहक नामघरैया के चरित्र में सन्निविष्ट सनातन मानवीय मूल्यबोध को उपन्यासकार ने सबसे ऊपर रखा है। उन्होंने नामघरैया में ऋषि-सुलभ त्याग और मानव प्रेम का आरोपण किया है। फिर भी, नामघरैया का चरित्र गगनचुंबी व्यक्तित्व नहीं पा सका है। इसका कारण यह है कि नामघरैया समाज-परिवर्तन की धारा में गुम हो गए विश्वास और मूल्यबोध को ही एक नए परिवेश में संप्रसारित करता है। क्रमशः परिवर्तित हो रही समाज-व्यवस्था में नामघरैया के विश्वास और मूल्य अप्रासंगिक हो जाने के कारण ही उपन्यासकार पाठकों को स्मरण दिलाता रहता है कि नामघरैया की सामाजिक स्थिति का महत्व

नाममात्र का है। नए समाज में आध्यात्मिक नेतृत्व नामघरैया के हाथ में नहीं है। जिस समाज में धर्म का प्रभाव शिथिल पड़ता जा रहा है, उसमें नामघरैया के मूल्यबोध के प्रति लोगों के आकृष्ट होने का कोई कारण भी नहीं। जरूरत के समय लोग नामघरैया के पास आते, उसकी बातें सुनते, पर वही हंसी का पात्र भी बनता।

दैनन्दिन सभी घटनाएं और दृश्यमान चीजें, चराचर जगत के सभी प्रपंचों की व्याख्या नामघरैया ईश्वर के विश्वास के आधार पर करता है। उसका ईश्वर उसके विश्वासों का समुच्चय है। ईश्वर नामघरैया के लिए कोई अलौकिक कार्य नहीं करता। कहीं कोई घटना अलौकिक जैसी लगने पर भी उपन्यासकार उसकी तर्कसंगत व्याख्या के प्रति आग्रही नहीं दिखता। नामघर में वंशीगोपाल के साथ होने वाले वार्तालाप और ईश्वर की आवाज–असल में उपन्यास में नामघरैया की अपनी कल्पना के रूप में ही दिखाए गए हैं। बुद्धिवादी उपन्यासकार का विश्वास है कि भगवान की आवाज यदि हमें सुननी है, तो नामघरैया की तरह ही सुननी होगी। लेकिन नामघरैया का ईश्वर और ईश्वर के न्याय के प्रति अपना ही विश्वास अटल और सुनिश्चित नहीं है। नामघरैया के चारों ओर के संसार में घट रहे नए घटना-प्रवाह को वह वंशीगोपाल की इच्छा से घटने वाली घटना अथवा ईश्वर का न्याय मानने में कठिनाई का अनुभव करता है। कभी-कभी वंशीगोपाल की प्रस्तर-मूर्ति को लक्ष्य कर नामघरैया की बातों से स्पष्ट है कि नामघरैया का ईश्वर के प्रति विश्वास यदा-कदा लड़खड़ा जाता है। मूर्ति के समक्ष साष्टांग प्रणाम करते समय भी नामघरैया गांव में घटने वाली घटनाओं की तर्कपुष्ट व्याख्या का ही अनुसंधान करता रहता है। ईश्वर की लीला मानकर घटनाओं में औचित्य नहीं देख पाता नामघरैया।

नामघरैया सबको भला पाता और किसी के प्रति ईर्ष्या-द्वेष को वह अपने हृदय में स्थान नहीं देता है। उसे जो मिल जाता है, उसी में संतुष्ट है और कुछ न मिलने पर भी कभी आपत्ति नहीं करता है। समाज के लिए कल्याणकर काम वह पर्दे के पीछे रहकर करता है और सफलता के लिए कोई स्वीकृति नहीं चाहता है। उसके चरित्र का सबसे उज्ज्वल गुण है–आत्मालोचना। जो नामघरैया अपने मामले में रीति-नीति और आचार-विचार के पालन में बड़ा कठोर है, वही बाहरी संसार में साधु और चोर के प्रति भी समदर्शिता रखता है। गांव के ही एक चोर के जेल जाने पर, परिवार में कमाऊ आदमी के अभाव में नामघरैया उसकी जीविका के लिए व्यस्त हो जाता है। नामघरैया बाखर को कारोबार करना सिखलाता है।

अनेक संघर्षों ने नामघरैया के अंतर्द्वंद्व को तीव्रतर किया है, फलतः उसका चरित्र बड़ा आकर्षक हो गया है। कभी-कभी, ऐसे संघर्ष का भी चरित्र में सह-अस्तित्त्व है, जिसकी कोई व्याख्या नहीं। रीति-नीति और सनातन मानव-मूल्यों का सजग प्रहरी होने पर भी कभी-कभी वही रीति-नीति का उल्लंघन भी करता है। सभापति बनने पर पुरोहित जी को प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र का फर्श बुहारना और पोछना पड़ेगा, ऐसी समझ के कारण सभापति पद के लिए उनका नाम प्रस्तावित करनेवाले परमा की धृष्टता के लिए वह कठोर भाषा में भर्त्सना करता

है। वही आदमी डिंब के परिवार को लोक-लाज से बचाने के लिए ब्याह के एक दिन पहले लड़की के एक मुसलमान युवक के साथ भाग जाने पर एक मनगढ़ंत कहानी कहकर झूठ का सहारा भी लेता है। असल में नामघरैया मानव-मूल्यों को चिरंतन और अपरिवर्तनीय नहीं मानता। वह उनकी सापेक्षता का ही विश्वासी है। मनुष्य का कल्याण होने पर वह उनका समर्थन करता है और यदि कल्याण में बाधक हो, तो उन्हें त्याग भी सकता है।वह सरल और सीधा है, पर मूर्ख नहीं है। बाहरी दुनिया में आए परिवर्तन के बारे में वही सबसे कम जानता है, परन्तु वही सबसे आगे परिवर्तन के साथ अपने आपको मिला सकता है। कागज मिल बांस के मचान पर कैसे बैठाएगा, यह प्रश्न करके अपनी नासमझी का इजहार कर वह खुद को हास्यास्पद बनाता है, लेकिन कागज मिल से संबंधित एक दूसरी दिशा में वह दूरदर्शिता और व्यावहारिकता का परिचय भी देता है। कागज मिल बांसबाड़ियों को खत्म कर देगी, उसके बाद बांस की जड़ों को रोपने की आवश्यकता वह बड़ी गंभीरता से समझता है और उस काम में अग्रणी भूमिका निभाता है।

अतुलानन्द गोस्वामी कहानी कहने की कला जानते हैं, इसलिए आरंभ से ही नामघरैया की कहानी में पाठकों की रुचि और कौतूहल बनाए रख सके हैं। चरित्र-चित्रण के क्षेत्र में नामघरैया के अलावा और किसी का चरित्र स्पष्टता से उजागर होने लायक अंकित नहीं हुआ है। नामघरैया के चरित्र की विविध रेखाएं उद्भासित करने के लिए वर्णित घटनाओं-उपघटनाओं में आए चरित्र भी निस्संदेह कठपुतले नहीं हैं और सामूहिक रूप से वे सब किसी-न-किसी वातावरण की सृष्टि करते हैं।

'नामघरैया' की कथावस्तु आरंभ से ही किसी सुनिश्चित परंपरागत रीति को मानक मानकर नहीं चली है। अन्य पुरुष में वर्णित घटनाएं प्रत्येक अध्याय में स्वयं पूर्ण हैं और घटनाएं समग्र रूप में नए-पुराने के द्वंद्व में लुप्तप्राय हो रही समाज की सुशृंखलता और नए समाज के स्वरूप को ही प्रकट करती हैं। घटनाओं को इकट्ठा करने के लिए नामघरैया को केंद्र में रखा गया है, परंतु नामघरैया घटना प्रवाह की परिचालक शक्ति नहीं है, अथवा घटनाओं के प्रवाह को नामघरैया नियंत्रित नहीं करता। घटना प्रवाह या कथावस्तु का केंद्र नामघरैया है या गांव, इसके बारे में उपन्यासकार खुद भी अनिश्चित है। शीर्षक में उसने नामघरैया को ही केंद्र में रखने की इच्छा प्रकट की है, ऐसा निश्चित करने पर भी पाठक देखता है कि किसी-किसी अध्याय का घटना प्रवाह नामघरैया को केंद्र से बाहर किए हुए है।

भारतीय दर्शन और असम की वैष्णव परंपरा में व्यक्ति के आर्थिक और राजनीतिक जीवन को स्वीकृति देने पर भी, वस्तुतः संयम और कठोर शासन को ही आदर्श मान लिया गया है। इंद्रिय-ग्राह्य दैहिक भोगविलास में आसक्त होना आदर्श नहीं है। नामघरैया कठोर अनुशासन और आत्मसंयम के आदर्श को सबसे ऊपर रखता है। त्याग, संयम और कठोर अनुशासन का मनोवैज्ञानिक उत्स तलाशने पर वैवाहिक या सांसारिक जीवन के प्रति संशय की भावना भी उद्घाटित हो सकती है, लेकिन लेखक ने वैसी कोई तलाश नहीं की। सांसारिक

जीवन में उलझना एक जंजाल है और नामघरैया ने इस जंजाल से अपने को दूर रखा है। उपन्यासकार ने जानबूझकर ही नामघरैया के जन्म और परिवार के वृत्तान्त का प्रसंग टाल दिया है। जिस गांव में नामघरैया जीवन-यापन करता है और आखिरी सांस छोड़ता है, वह गांव केवल घटना की पृष्ठभूमि ही नहीं है, गांव खुद भी लोगों की गतिविधियां बहुत हद तक नियंत्रित करता है। यह भी कह सकते हैं कि नामघरैया के कर्म और चिंतन का भी नियंत्रण गांव का जीवन करता है। गांव के साथ नामघरैया का भावनात्मक संबंध इतना गहरा है कि तीर्थयात्रा की तरह के कामों में भी नामघरैया गांव से दूर नहीं जा सका है।

नामघरैया ने भगवान या वंशीगोपाल को कभी भी बाहरी जगत में नहीं ढूंढा। वंशीगोपाल के अन्वेषण में वह तो चिंतन और चेतना के समंदर में डुबकियां लगाता है। हाट में सुग्गे द्वारा निकाले गए कागज के टुकड़े को पढ़कर लोगों के भविष्य के बारे में भाग्य बतानेवाले प्रवंचक को नामघरैया बेनकाब कर डालता है। वह कोई भी बात युक्तिपूर्वक सोचे-समझे बिना मान नहीं लेता। लेकिन, युग की परंपरा और मूल्यबोध अथवा सामाजिक आचार-विचार या संस्थाओं को वह व्यक्तिगत तर्क और युक्ति से ऊंचा स्थान देता है। लोगों के सुख-दुख के लिए वह लोगों को ही जिम्मेवार ठहराता है।

'नामघरैया' उपन्यास की रोचकता का एक कारण यह भी है कि घटनाओं का वर्णन प्रधानतः नामघरैया के नजरिए से किया गया है और उपन्यासकार ने अपनी टिप्पणी देने के लिए कहीं भी कथाप्रवाह में अवरोध आने नहीं दिया है। नामघरैया के नजरिए से वर्णन करने के कारण उपन्यासकार तत्युगीन असम और भारत के समाजजीवन को प्रभावित करनेवाली आर्थिक, राजनीतिक इत्यादि घटनाओं को कहानी की धारा में सम्मिलित किए बिना ही रह गया है। नए परिवर्तनों ने असम के भीतरी गांवों को जितनी दूर तक प्रभावित किया है, 'नामघरैया' की कथा में परिवर्तन का समावेश उतनी ही दूर तक हुआ है। उन परिवर्तनों में बाढ़-पीड़ित लोगों की खेती में ट्रैक्टर से जुताई, कागज की मिल की स्थापना और गांव में एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र के उद्‌घाटन के प्रसंग उल्लिखित हैं। इन परिवर्तनों के कारण ही पुराने आचार-विचार और मूल्यबोध का भी संकट उपस्थित हुआ है। प्रेम और त्याग के आदर्श में विश्वास करने वाले लोग परिवर्तन की धारा में क्रमशः अल्पमत होते गए हैं और एक-दूसरे के सुख-दुख को मिल-बांटकर जीवन-यापन करने की सामाजिकता की धारा क्रमशः लुप्त होती गई है।

वैष्णव परंपरा और आदर्श का प्रभाव आधुनिक असमिया संस्कृति और सामाजिक जीवन पर, कम मात्रा में होने पर भी, विद्यमान है। ऐसी ही दिशा और दृष्टि से 'नामघरैया' की कथावस्तु गढ़ी गई है। निरक्षर होकर भी नामघरैया जाति-धर्म के व्यवधान को पार कर मानवता पर अपने विश्वास को स्थिर रख सका है और यह वैष्णव परंपरा में पले-बढ़े होने के कारण ही संभव हो पाया है।

उपन्यास की कथा के आरंभ के साथ-साथ एक गांव के नर-नारी, लड़के-लड़कियां, जवान-बूढ़े-सब के-सब दिन-प्रतिदिन के जीवन-संग्राम में उतर पड़ते हैं जिससे चित्रण बड़ा ही सजीव हो उठा है। लोगों की कथित भाषा के साथ उपन्यासकार का निविड़ परिचय नाटकीय परिस्थितियों और संवादों को सहज-स्वाभाविक स्वतःस्फूर्ति प्रदान करता है। नायक नामघरैया के इस प्रेम, उदारता, विवेक, सहानुभूति, निःस्वार्थता, सूक्ष्म हास्य-रस-बोध इत्यादि के कारण पाठक के मन में अंकित उसकी छवि सरलता से धूमिल होने वाली नहीं है। वस्तुतः 'नामघरैया' आधुनिक असमिया साहित्य का एक रोचक उपन्यास है।

–आनन्द बरमुदै

1

केले के पत्ते की रीढ़ से नामघरैया[1] ने अपनी माप की पाटी खुद ही बुन ली थी। उसे ही बिछा कर उसने एक लंबी जम्हाई ली ! उसके बाद दिन भर की थकान से चूर बदन लिए उसी पर निढाल लेट गया। दाहिने हाथ की कोहिनी मोड़कर तकिया बना लिया। उसे तुरंत लगा कि नींद दबोचे जा रही है। उसी तंद्रा में नामघरैया ने बुदबुदाया, "बहुत अच्छी तरह निबट गया बिहु[2], है न भगवान... ?"

बहुत अच्छी तरह निबट गया। एक महीना पहले शुरू हुई धूम-धाम का आज अंत हुआ। गांव में इसी वर्ष पहली बार इस तरह बिहु सम्मेलन आयोजित हुआ। गांव के खेतों से नगर के मंच तक पहुंचा बिहु, मानो शहरी पोशाक पहने फिर से गांव लौट आया हो। नौजवानों की मेहनत ! किसी को भी 'जरूरत नहीं, छोड़ो' कहने का कोई कारण ही न मिला।

नामघर का प्रांगण बहुत लंबा-चौड़ा है। यदि पश्चिम की ओर प्राइमरी स्कूल नहीं होता, तो फुटबाल खेलने का मैदान ही हुआ होता। गांव के सभी सार्वजनिक कार्य वहीं हुआ करते। माघ बिहु के 'उरूका'[3] का भोज, वार्षिक रास-उत्सव का विराट मेला वहीं होता। वोट मांगने वाले नेता, उपनेता भी वहीं पर सभा करते। दूसरी तरह की सभा-गोष्ठी भी वहीं होती।

नामघर में नाम-कीर्तन, भागवत पाठ, अष्टयाम के अलावा रास-उत्सव के बारे में विचार-विमर्श होता। भावना[4] का पूर्वाभ्यास होता, और भी बहुत कुछ होता।

प्रांगण में कुछ भी क्यों न हो, सभापति बनकर कोई भी अगवाई क्यों न करे, एक आदमी न हो तो कोई भी काम सुचारु रूप से हो नहीं पाता और वह है–नामघरैया।

"अरे ओ नेम !" रजत ने नामघरैया को पुकार कर कहा। "तुम्हें खबर तो है ? आज तय किया गया है, हमारे यहां बिहु सम्मेलन होगा।" रजत नामघरैया को अंग्रेजी ठाठ में ही पुकारा करता। नामघरैया कभी कुछ नहीं समझ पाता। हां, 'नेम' संबोधन से उसे ही पुकारा जाता है, यह जरूर समझता। आज भी वह समझ नहीं पाया कि बिहु सम्मेलन क्या चीज होती है। वैसा सम्मेलन नामघरैया ने देखा भी नहीं। फिर भी, कुछ आयोजन होने वाला है,

---

1. वैष्णव मंदिर 'नामघर' का सेवक।
2. असम का जातीय उत्सव।
3. मकर संक्रांति।
4. प्राचीन असमिया नाटक।

यह उसने अच्छी तरह समझा। बिहु भी आ ही गया है। आया, माने एकदम बवंडर की तरह आया। स्कूल, नामघर कहीं भी पूर्वाभ्यास का अंत नहीं। ढोल, तुरही, पिपही की गूंजों से कान फटे-फटे जा रहे हैं। उसके बीच ही शामियाने की नाप-जोख, बांस काटना, तिरपाल तलाशने की जद्दोजहद और सबका रामबाण है यह नामघरैया।

'ओ नामघरैया', 'अरे नेम', 'रे नाम', 'अजी बहरे नामघरैया', 'ओ घरुवा' इत्यादि सौ नामों से अलग-अलग लोग नामघरैया को पुकारते, एक सौ एक काम कराने के लिए। "यादव की सीढ़ी मत लाना जी, राजू के बखार की बगल में एक चौकी टिकाकर रखी हुई है, उठाकर ले आ, जा...।"

नामघरैया जब कभी खीझ जाता, तब सोचता कि कह ही डालूं कि भलेमानस, मेरे नाम ही तो एक सौ एक दे रखे हैं न, पर हाथ तो ये दो ही हैं। या फिर, यह कि रुको-रुको, क्या तुम लोग समझते हो कि मेरे पांवों के टखनों में दो डैने लग गए हैं ?

पर वह कहता नहीं। सब उसका भरोसा करते हैं, इसी से ऐसा कहते। किसी गलत काम के लिए नहीं कहते न !

फिर भी, एक बात तो है ही। सुबह एक पहर तक नामघरैया को पुकारने का 'कानून' नहीं। मुंह-अंधेरे उठकर नामघरैया बाहरी आंगन बुहारता और बांध के उस पार नदी मे एक डुबकी लगा आता और फिर मणिकूट[1] से शुरू करके दरवाजे तक पूरा नामघर एकबार पोंछ डालता। पुरोहित के आने से पहले पूजा और कीर्तन के लिए आवश्यक सभी चीजें पास में जतन से रख देता और फिर तेजी से अपनी रसोई में चला जाता। एक मुट्ठी चावल धोकर बैठा देता और दूसरे चूल्हे पर चाय का पानी चढ़ा देता।

पुरोहित के जाने के बाद विग्रह की वेदी के सामने का भाग फिर से साफ-सुथरा करता और तांबे का कलश, डोल इत्यादि सभी पात्र उसी समय नदी ले जाता और धो डालता। सभी चीजें संभाल-सजाकर रखते हुए अपने आप घोषा[2] का एक पद गुनगुनाता और विनयपूर्वक प्रणाम करके रसोई में फिर चला जाता। पानी में चायपत्ती डालकर एक उबाल की प्रतीक्षा करता। बाद में उसे ही एक कटोरी में डालकर गुड़ के टुकड़े के साथ पी डालता।

इन सबसे छुट्टी पाकर नामघरैया कभी इस घर, तो कभी उस घर निकल जाया करता। पर इधर कई दिनों से यह नहीं हो पा रहा था। मणिकूट का द्वार बंद कर, हाथ में ही प्रसाद का चना-केला लिए आंगन में आने भर की देरी होती कि लड़कों का एक झुंड छीना-झपटी शुरू कर देता। पूरा झुंड पुरोहित के जाने का इंतजार सांस रोककर करता। उनके बांध पर चढ़ते ही, सभी लड़के वाचाल हो उठते। कोलाहल शुरू हो जाता।

नामघरैया कहीं नहीं जा सकता। सूरज सिर के ऊपर आते ही रसोई से भात खा आता। उस समय भी वह आवाज सुनता "अरे ओ नेम ! दुलू पर्दे का कपड़ा निकाल कर रख

1. असम के संत शंकरदेव प्रवर्तित वैष्णव मंदिर 'नामघर' के विग्रह की वेदी।
2. शंकरदेव रचित 'कीर्त्तनघोषा' या माधव देव रचित 'नामघोषा'।

लेना। लाना मत भूल जाना।"

मंच बनाने और सजाने का काम नामघरैया ही देख रहा है। वह काम में लगा भी है। नामघरैया के अनजाने भी बहुत सारे काम हो रहे हैं, यह उसने बलिन के मुंह से सुना। निमंत्रण-पत्र छपवाना, विशिष्ट अतिथि को आमंत्रित करना, माइक (नामघरैया उसे माइकर कहता, क्यों, वही जाने) रोशनी-व्यवस्था, बैठने का बंदोबस्त करना, और न जाने क्या-क्या। "तू समझता है कि अपना खुला बदन दिखाते और फुदकते रहने से बिहु सम्मेलन हो जाएगा, वैसा नहीं है जी, घड़ियाल !" बलिन ने नामघरैया को चिढ़ाया।

वही बिहु सम्मेलन आज संपन्न हो गया। सुबह चौखात के डिंबेश्वर बरा ने एक झंडा फहराया जिसे 'पताका उत्तोलन' कहा गया। उसके बाद से तो कहना क्या ! खेल-कूद, भाषण, बिहु-नृत्य और शाम से तो मंच के नेपथ्य में सर्वत्र नामघरैया विराजमान ! कहां पानी चाहिए, किसका बाजा किस दीवार में टिकाकर रखा हुआ है, उद्‌घाटन करने वाले का भाषण खत्म होते ही लड़कियां उरूलि ध्वनि[1] देंगी, नामघरैया को डुगडुगी पीटनी होगी काम का कोई अंत नहीं आराम भी नहीं।

और आयोजन के बाद ? तब भी बिहु ही समझिए। खाने-पीने का कार्यक्रम अतिथि, कलाकार, स्वयं-सेवक युवक युवती सब के लिए खाने की व्यवस्था की गई है। उसकी व्यवस्था करने वाले लोग भी हैं। भगनीया गांव का नंद उधर का मैनेजर है। लेकिन वहां भी नामघरैया को मदद करनी पड़ती है।

नामघरैया उस तरह सार्वजनिक तौर पर तैयार किया गया भोज नहीं खाता। नामघर के भंडार से सटा ही नामघरैया का एक छप्पर वाला रसोईघर है। उसी में दो चूल्हे हैं। वह नहा-धोकर एक में खाना बनाया करता। निर्धारित नियम, से न बनाया जाए, तो वह नहीं खाता।

सार्वजनिक भोज खत्म होते-होते आधी रात हो गई। मेहमानों-अतिथियों के चले जाने पर नामघर के सामने की जगह साफ-सुथरा कर नामघरैया नहा आया। शरीर जवाब दे रहा था। रसोई की ओर एक बार देखा और लपेटी पाटी हाथ में ले ली।

नामघर का फर्श पक्का हुए तीन बर्ष ही हुए हैं। सुबह-शाम बुहारते-पोंछते एक दिन मन में हुआ कि नामघरैया सुनसान फर्श पर ही एक रात सोकर देखे। और वही अभ्यास बन गया। मणिकूट के दरवाजे की सीध में भगवान की वेदी की तरफ सिर करके नामघरैया सोया करता है।

"क्षमा करना। भगवान...।" पहले दिन नामघरैया ने भगवान सें विनती कर ली थी।

आज भी केले के पत्ते की रीढ़ से बुनी पाटी फैलाकर उसने एक लंबी जम्हाई ली और पाटी पर लुढ़क पड़ा। तुरंत लगा कि नींद दबोचे जा रही है। तंद्रा की उसी हालत में वह भुनभुनाने लगा, "बहुत अच्छी तरह निबट गया बिहु, है न, भगवान ?"

1. मंगल-सूचक 'लू-लू' ध्वनि करना या गाल बजाना।

नहीं, निबटने की बात ही नहीं। सभी युवकों ने इतने आग्रह से हाड़-तोड़ मेहनत की, रंगरेलियों के बीच एक महीना रिहर्सल किया, जिले से कई गणमान्य अतिथि बुलाए, रोशनी और माइक से चारों ओर रमन-चमन हो गया, अच्छी तरह नहीं निबटने की बात ही नहीं थी।

"बापा की बिटिया को ध्यान से देखा न भगवान ? वाह, उस छोटी-सी बच्ची ने क्या नृत्य किया ! सभापति ने पास में बुलाया और थोड़ी देर गोद में बैठाकर दुलराया। दुलराएगा ही। सारी सभा ने तालियों की गड़गड़ाहट से उसे सम्मानित किया, देखा न ?"

बालिचापरि की हुंचरि[1] मंडली भी कम न थी।

"तो भी एक बात तो है ही भगवान, मुझे इसका संदेह है। बिहु अच्छी तरह हुआ या बुरी तरह, मैं समझ नहीं पाया। वार्षिक बिहु से मुंह फेरकर सभी लोगों ने 'सम्मेलन' किया , कोई किसी के घर नहीं गया। खुद मैं भी, और तो और, पुरोहित के घर जाकर प्रणाम तक कर आने का समय निकाल नहीं पाया। एक और बात है न...।"

नामघरैया अपने आप बक रहा है। जीभ मानो बेजान हो गई है। अचानक जैसे किसी ने मणिकूट से उसे पुकारा, "नामघरैया !"

नामघरैया हड़बड़ा उठा। एक ही छलांग में मणिकूट का दरवाजा खोलकर वेदी की ओर देख उसने पूछा, "क्या हुआ, भगवान ?"

अब उसे भान हुआ। असल में आवाज भंडार की ओर दरवाजे से आई है। किसी ने उसे पुकारा है। लपककर गया और दरवाजा खोलते ही नामघरैया चकित रह गया। सोण भैया की मां है।

"क्या हुआ, चाची ?"

चाची ने उसे धकेलकर भीतर प्रवेश किया। एक हाथ में लालटेन और दूसरे हाथ में केले के पत्ते से ढंकी एक कटोरी। पूछा, "तू नींद में क्या बक रहा था ?"

"मैं कहां, मैं ?"

"आज क्या खाया ?"

"रात में तो खाना बनाना हुआ ही नहीं, चाची ! सोचा, अब रात कितनी बाकी है, सबेरा...।"

"दोपहर क्या खाया ?"

"दोपहर का खाना... ओह, भूल ही गया, चाची ! इतना काम था...।"

"खाली पेट था, शायद उसी की शिकायत भगवान से कर रहा था ?"

"नहीं-नहीं, मैं शिकायत क्यों करूंगा ?"

"अच्छा हुआ, रहने दे। एक कटोरी चिउड़ा लाई हूं, दूध के साथ खा ले। कटोरी दिन में दे आना।" कहकर चाची चली गई। चाची का घर नामघर की सीमा से ही लगा हुआ है।

हाथ में चिउड़े की कटोरी लिए कुछ देर बेवकूफ की तरह नामघरैया खड़ा रहा। फिर

1. वैशाख बिहु में घर-घर जाकर नाचने गाने वाली मंडली।

उसने एक हाथ से दरवाजा बंद किया और मणिकूट के दरवाजे तक गया। वह तो खुला की था। चिउड़े की कटोरी हथेली में लेकर भगवान की ओर दिखाया और एक हंसी बिखेर कर नामघरैया ने कहा, "यह तुम्हारा ही काम है, मैं समझता हूं, भगवान !" उसके बाद खड़ा होकर इधर-उधर सिर घुमाया और फिर पूछा, "अच्छा, तुम्हें कुछ गंध लग रही है, भगवान ? बकुल फूल की ! चाची ने जो कुछ कहा, उसी के कारण ऐसी गंध आ रही है, समझते हो ?"

संभव होता, तो पत्थर का भगवान खीं-खीं कर हंसा होता, नामघरैया की बात सुनकर। 'अरे, किसी के कहने से फूल की गंध नहीं निकलती न।' असल में नामघरैया ही वैसी कल्पना कर रहा था।

2

"आहे बाखर ओ ! तुहु कि निमित्ते ऐसने बिहानेहि आवलि[1] ?" पंक्ति किसी अंकिया नाट[2] की नहीं। नामघरैया की अपनी है। रास की भावना[3] खत्म हुए दस दिन भी नहीं हुए हैं। जिस-तिस के मुंह से अभी भी एकाध पंक्ति सुनाई पड़ती है। और अभी सबेरा भी नहीं है। धूप अच्छी तरह खिल चुकी है। खेतों के ओसकण सूखने लगे हैं। धान की कटाई के लिए दो-एक लोग खेत में आ चुके हैं। भावना का पंडाल उठाते समय दो-चार बांस अलग करके रख दिए गए थे। नामघर की टोकरी, डलिया इत्यादि और कई आसनी, चटाई बनानी है। उसी के लिए बांस की फटहे-फटहियां, पट्टी-सीकियां तैयार करने के लिए नामघरैया निकल पड़ा। दोपहर में वह भी खेत में जाएगा। पुरोहित के थोड़े धान की कटाई करनी है।

लेकिन नामघरैया ने जैसा चाहा, वैसी हंसी बाखर के होठों पर नहीं थिरकी। दस साल का लड़का है बड़ा तेज। मस्त फिरता रहता है। बोली बड़ी मीठी है। सभी प्यार करते हैं। पर अभागे को बाप के परिचय ने ही बर्बाद कर दिया। इस समय भी आया है तो कमीज की एक आस्तीन मुंह से चबाते हुए। दोनों आंखें फटी-फटी-सी। दूसरे हाथ में वह कुछ लाया है, जो पीछे छिपाए है। नामघरैया समझ नहीं पाया। अचरज से पूछा नामघरैया ने, "क्यों रे बाखर, तू इतना गूंगा क्यों हो गया है ?"

"मां ने भेजा है। कहा है कि तुम्हें भात का मांड पसाना हो तो, इसी में"–कहकर उसने पीठ की ओर छिपाकर लाई छोटी थाली आगे करके नामघरैया को दिखाई। फिर कहा, "हमने तीन दिनों से खाना नहीं खाया है। और मां ने कहा है कि बच्चों को दूध नहीं मिला है।"

1. ब्रजबुलि।
2. शंकर रचित ब्रजबुलि भाषा का प्राचीन एकांकी।
3. रासोत्सव पर खेला जाने वाला प्राचीन असमिया नाटक।

नामघरैया डलिया की तीली छील रहा था। वह रुक गया। एक बार उसने मणिकूट की ओर देखा। मानो मन-ही-मन वेदी के भगवान से कहा, 'देखते हो भगवान, यह तो तुम्हारा ही काम है।'

वह कुछ पल बाखर की ओर एकटक देखता रहा। देखते हुए ही उसने कहा, "मैंने तो स्नान किया ही नहीं है, रे बाखर...।" मानो नामघरैया ने कोई बड़ा अपराध किया हो। "तू एक काम कर, थाली मेरी रसोई की दहलीज के पास रख दे। थोड़ी देर बाद आना। मैं कुछ डाल दूंगा, ले जाना। अच्छा!"

बाखर की जान में जान आई।

"थाली ठीक से धोई है न ?"

"हां" कहकर कमर से सरकते हुए पैंट को एक हाथ से पकड़े बाखर गायब हो गया।

नामघरैया के हाथ रुक गए। नन्हें-से लड़के ने अपने घर की जो तस्वीर रखी थी, वही उसकी आंखों में तैरने लगी।

बाखर का बाप रुद्र चोर है। चोर बर्तन-बासन का ही है, सोने-चांदी का नहीं। पकड़ा जाता भी है आसानी से। पुलिस का लप्पड़-थप्पड़ खाना उसके लिए कोई बात ही नहीं है। थाने जाना जैसे उसे अच्छा ही लगता। नामघरैया उसकी बात हमेशा सोचा करता। बेहुनर, आलसी, यह रुद्र कोई कठिन काम कर ही नहीं सकता। ब्याह किया, लड़के-लड़कियां भी तीन हैं। घर के पालन-पोषण के लिए कोई उपाय ही नहीं उसके पास। दूसरे की खेती-बाड़ी में लगकर एक मुट्ठी भात का इंतजाम कर सकता है। पर लगता नहीं, उससे आसान है चोरी। उस बेशर्म के लिए उससे भी बड़ी बात है जेल की खिचड़ी।

वह एक बार में कम-से-कम तीन महीने जेल में रहता। शायद हाकिम भी उस पर दया करता है। पुलिस भी करती होगी। करे, पर वह नहीं करता, घरवाली को बहुत परेशानी होती है। किंतु यह बात तो उसकी खोपड़ी में ही नहीं घुसती।

'तुम यह सब कैसे सहते रहते हो, भगवान ?' नामघरैया ने मन-ही-मन प्रश्न किया और हाथ में लिया काम पूरा किया। काम जल्दी खत्म करके वह भगवान के आगे का हिस्सा साफ-सुथरा करेगा और फिर रसोई में जाएगा।

उसने वैसा ही किया। नहा-धोकर दूसरे नित्य-नियम के काम भी तेजी से पूरा करके नामघरैया रसोई में गया। चावल थोड़ा ज्यादा चढ़ा दिया। उसी में आलू डाल दिए। सीझ जाने पर, सारा मांड़-भात बाखर की रखी थाली में डाल दिया।

बाखर आ ही चुका था। नामघरैया ने अपना एक गमछा फैलाया और उसी में थाली बांध, लटकाकर ले जाने लायक एक पोटली बनाई। हाथ धोकर भंडार में गया। प्रसाद के लिए रखा हुआ चीनी चंपा केला एक घौद था। पूरा घौद ठीक से पका ही नहीं। उसी में से एक आंटी काट लाया।

केले और पोटली बाखर के हाथ में देकर कहा, "गमछा लौटा जाना।"

"अच्छा" कहकर बाखर चला गया।

नामघरैया हांड़ी की ओर फिर नहीं गया। पुरोहित नित्य पूजा करके लौट गए। नामघरैया मणिकूट का फर्श फिर पोंछने के लिए हाथ में नूरा लिए वेदी की ओर मुंह करके बैठ गया। बैठे-बैठे वेदी की ओर देखते हुए पूछा, "यह तो ठीक है प्रभु कि रुद्र को चोर ही बनाया। उसकी पत्नी और छोटे-छोटे लड़के-लड़कियों को यातना क्यों दे रहे हो ?"

भगवान को मौन देखकर नामघरैया की आवाज इस बार ऊंची हुई। "मैं इस समय अनशन नहीं कर रहा, भगवान ! लेकिन यदि बाखर का कोई ठिकाना नहीं लगाया, तो मैं... तो मैं...।" बाखर का ठिकाना न लगाने पर नामघरैया क्या करेगा, वह तुरंत निश्चय नहीं कर पाया। पत्थर के देवता ने भी घूमकर नामघरैया से कुछ नहीं कहा। झटपट काम खत्म करके नामघरैया बाहर आ गया।

जब सूरज डूबने को हुआ, तब नामघरैया खेत से लौटा। नामघर के नजदीक आकर वह एक पल के लिए थमककर रह गया। वह अकेला खड़ा बाखर तो नहीं है ! इस्स बेशर्म ! नामघरैया मन-ही-मन गुर्राने लगा। बाखर एक डाभ नींबू अकेले लतियाता फिर रहा है।

नामघरैया को गुस्सा आ गया। लपककर आया और बाखर का कान पकड़ लिया और कहा, "अरे राक्षस ! नींबू से गेंद खेल रहा है ! उसे यदि बुधवार की हाट में बेचता, तो तुझे आठ आना नहीं मिलता ?"

नामघरैया के कान पकड़ते ही बाखर चकित हो गया था, बातें सुनकर तो घबरा ही गया। नामघरैया ने उस पर कभी इस तरह गुस्सा किया हो, उसे याद नहीं आता।

बाखर को वहीं छोड़ नामघरैया सीधे नदी की ओर गया। नहाकर लौटते-लौटते सूरज डूब गया। अब तो दीया जलाना होगा। ... भीतर जाना चाहकर फिर से थमक गया नामघरैया। दीवार की कुर्सी पर बाखर बैठा फटा हुआ नींबू अच्छी तरह फाड़कर खा रहा है।

इस बार नामघरैया ने बाखर से कुछ नहीं कहा। धोती बदली और एक दीया जलाकर देवमूर्ति के पास का दीया जलाने के लिए अंदर चला गया। दीया जलाकर डुगडुगी पर थाप देते समय बाहर बैठा बाखर हड़बड़ाकर उठ खड़ा हुआ। उसे तभी होश आया कि शाम हो चली है और वह घर की ओर दौड़ पड़ा।

"अरे ओ बाखर, तकलीफ ज्यादा हुई क्या ?" कहते हुए नामघरैया वापस आया। देखा, बाखर चला गया है और नींबू के छिलके पड़े हैं।

नामघरैया का मन पसीज गया। हे भगवान, देखो तो, लड़के ने भूख उसी से मिटा ली।

केले के पत्ते की रीढ़ से बुनी पाटी बिछा रात में सोते समय बाखर की बात फिर याद आई। मन होने पर भी नामघरैया कुछ कर नहीं सकता। खुद उपवास करके उन लोगों के पालन-पोषण की बात भी नहीं सोच सकता। इस घर, उस घर से चीजें मांग-मांग कर

दो-चार दिन तो काटा जा सकता है। हमेशा तो चल नहीं सकता न ?

आज भगवान के लिए रखे हुए केले के घौद से ही... । 'हे भगवान ! क्षमा करना। तुम्हारे लिए लाए केले में से ही उनलोगों को खाने के लिए कई दे दिए। तुम भी तो कीट पतंग से लेकर अरुई... ।'

अरुई !

नामघरैया की खोपड़ी में झट एक विचार कौंधा। अगले बुधवार को खूब सबेरे उठा और खेत में चला गया। द्रोण के पौधे कई जगह उग आए हैं। धान की कटाई के बाद वे सब दिखाई पड़े हैं। एक मुट्ठा वही उखाड़ लिया। छोटे-छोटे मानिमुनि[1] देखे, तो थोड़ा वह भी उखाड़ लिए।

नामघरैया की सीमा के मेड़ की बगल में अरुई थी। रास के समय साफ कर दी गई थी। उसकी कोंपलें भी कहीं-कहीं निकल पड़ी थीं। इस समय अरुई की कोंपल पाना मुश्किल था। फिर भी, उसने कई तोड़ लीं।

एक टोकरी में सभी आंटियों को रखा और नामघरैया नहाने चला गया। थोड़ा आगे बढ़कर बाखर के फाटक पर से चिल्लाकर बाखर को कहा, "अरे ओ बाखर, चल ना, हाट चलेंगे।"

नामघरैया हमेशा बुधवार को हाट जाता। यह जिम्मेदारी उसे ही दी हुई है कि एक घौद कच्चा केला ले आया करे। पकने पर नित्य पूजा के काम आएगा। अपनी जरूरत की दो एक चीज भी वहीं से ले आता। नामघर का चना, मूंग तो है ही।

एक कटोरी में बाखर के लिए थोड़ा-सा नाश्ता अलग करके नामघरैया ने टोकरी पास में रख ली। कुछ पुआल ले आया था। बाखर के आने पर उसे पास में बैठा लिया। और साग को मुट्ठी-मुट्ठी करके बांध लिया। बाखर ने पूछा, "यह सब क्या करोगे ?"

"देखता रह।"

नामघरैया ने देखा है कि हाट में ऐसे सागों की मुट्ठियां भी बिकती हैं। खरीदने वाले भी मिल जाते हैं।

हाट लगभग चार किलोमीटर दूर है। नामघरैया हाट के ठेकेदार को पहचानता है। उसने विनती करके कहा, "इस लड़के के घर में खाने का दाना नहीं है। परेशान मत करिएगा।" कुछ कहे बिना ठेकेदार ने बाखर की ओर देखा और हुकुम दिया, "उस चंपा के पेड़ के नीचे बैठना, जा।"

देर तक बैठने की जरूरत ही न पड़ी। कहीं का एक आदमी तीन रुपए में सारा साग खरीद ले गया। तब तक बाखर को कुछ समझ में ही नहीं आया था। "अरे, इन रुपयों को संभाल कर रख ले। मां के हाथ में देना। अब चल, अपना बाजार करें।"

---

1. एक औषधीय पौधा, जिसे साग की तरह खाते हैं।

बात बाखर के लिए बिलकुल कल्पना से परे थी। उसने सोचा ही नहीं था कि नामघरैया उसे इस तरह से कमाने का व्यावहारिक प्रशिक्षण देगा। बाखर की मां भी बहुत कृतज्ञ हुई।

अब हाट जाना एक नियम-सा हो गया। बाखर जब से सयाना हुआ है, तब से मां भी साग-सब्जी इकट्ठा कर देती। बाड़ी का नींबू, पपीता, आंठी, केला आदि भी बेटे की टोकरी में रख देती।

एक दिन बाखर का हौसला बुलंद करने के मन से नामघरैया ने पूछा, "ओ बाखर, अब तू अकेले जा सकता है न ?" जा सकता था अकेले, पर जाने से क्या, दाम पक्का करना सीख नहीं पाया था। नामघरैया भी जाता, पर बाखर को अकेले जाने के लिए छोड़ दिया।

एक दिन नामघरैया जब अपना काम करके लौटना चाह रहा था, तब तक हाट में बाखर को नहीं देखा। लड़का आज आया ही नहीं क्या ? शायद कुछ मिला ही न हो। नामघरैया सड़क पर आया और घर की ओर डग बढ़ाने लगा। इसी समय पीछे से एक जीप आई और नामघरैया के पास रुक गई। चालक ने आवाज लगाई, "नामघरैया !"

उसकी ओर देखकर नामघरैया रुक गया। यह युवक तो जिले का हाकिम है। बिहु सम्मेलन में आया था। अनेक कामों में चक्कर लगाते नामघरैया को देखा था। पहचान गया। "घर जाओगे न ? आओ...।"

नामघरैया गद्गद हो गया और जीप पर जा बैठा। थोड़ी दूर जाते ही हाकिम ने गाड़ी रोकी। जेब से एक सिक्का निकालकर नामघरैया को दिया कि खोमचे वाले लड़के से दो पान खरीद लाए। दो पान लेकर गाड़ी पर बैठना चाहते ही नामघरैया ने देखा कि बाखर हाट आ रहा है। पर यह क्या ? आंखों से आंसू की धारा बह रही है। जरूर उसे मां ने किसी कारण से पीटा होगा।

गाड़ी में न बैठ नामघरैया ने आगे बढ़कर आवाज लगाई, "क्या हुआ, ओ बाखर !"

रुलाई ने बाखर को झकझोर दिया। हाकिम को भी आश्चर्य हुआ, "यह लड़का कहां का है, नामघरैया ?"

"हमारे यहां का ही है, साहब !" कहकर नामघरैया ने बाखर की पीठ पर हाथ फिराया और पूछा "मां ने मारा तो नहीं ?"

रुलाई पीते हुए बाखर ने कहा, "मां ने नहीं मारा। थाना के दरोगा ने ...।"

"दरोगा ने ?" इस बार हाकिम चकित हुआ। "दरोगा ने तुम्हें क्यों मारा ?"

पहले की तरह ही रोते-कलपते बाखर ने कहा, "मारा नहीं, दो पके पपीते...।"

"पपीते ? इधर आ।" कहकर हाकिम ने उसे पास बुलाया। नामघरैया भी अचरज में पड़ गया। बाखर को हाकिम के पास बढ़ा दिया।

बाखर की टूटी-फूटी बातों से पता चला कि नए थाने के नए दरोगा ने बाखर के पके पपीते की टोकरी में से दो अच्छे पपीते उतार लिए। दाम पाने की आशा में बाखर उसके चेहरे की ओर देखता रहा तो दरोगा ने पूछा, "क्या हुआ ?" बाखर ने सहमते हुए कहा, "दाम ... ?"

"कितना दाम चाहिए ?"

"नहीं जानता। कितने में बिकता है ?"

"तू हाट जा। और पपीता बेचकर जितना दाम मिले, उतना ही लौटते समय मुझसे ले जाना।"

बात समझ न पाने के कारण बाखर खड़ा ही रहा। दरोगा ने गरजकर कहा, "जा।"

हाकिम ने पपीता देखा। बाखर से कहा, "तू भी बैठ गाड़ी में। यह पपीता मैं खरीदूंगा।" कहकर जेब से एक दसटकिया नोट निकाला और बाखर को देकर कहा, "लो इस पपीते का दाम।"

बाखर की तो बात ही क्या, नामघरैया की भी बोलती बंद। एक पपीते का दाम दस रुपया ! और वह भी बचे-खुचे छोटे पपीते का ! इस बार हाकिम ने दोनों को हुक्म दिया, "उठो नामघरैया, तू भी उठ।" हाकिम ने हाथ बढ़ाकर नामघरैया से पान का बीड़ा लिया और गाड़ी चालू कर दी।

थाना नया बना है। आबादी बढ़ी है। हाल में वहीं पर एक लंबा आंदोलन भी हो गया है। इलाके में एक थाने की जरूरत महसूस हुई।

थाने से कई गज की दूरी पर ही जीप खड़ी हुई। हाकिम ने बाखर को गाड़ी से उतरने के लिए कहा। "खाली टोकरी ले जा। दरोगा से कहो कि पपीते का दाम देगा। बाकी पपीता बेचकर कितना दाम मिला, कह देना। हम आ रहे हैं।"

बाखर बुद्धू की तरह उतर पड़ा। कमीज की जेब में हाकिम का दिया दसटकिया नोट था।

दरोगा ने देखते ही पूछा, "तू आ ही गया ? पपीते के कितने पैसे मिले ?"

"दस रुपए।"

"दस रुपए। पपीते का दाम, या तू भी साथ में बिक गया ?"

बातें समझ नहीं पाया बाखर। बाएं हाथ से जेब से नोट निकालकर दिखाया। दरोगा बरस पड़ा, "तू कहीं से चुराकर ले आया है यह।"

"आपने कैसे जाना कि इसने चोरी की है ?" प्रश्न किया हाकिम ने, जो इस क्षण तक वहां पहुंच गया था। दरोगा ने पहचानते ही हड़बड़ाकर उठते हुए साहब को सलाम ठोंका और कहा, "मैं तो इससे मजाक कर रहा था। साहब।"

"अब मजाक बंद कीजिए और उसे बीस रुपये दे दीजिए। आपने इससे कहा था न कि, बचा पपीता बेचकर जितना दाम पाएगा, उतना ही उस दो पपीते का भी दाम आप देंगे।" दरोगा ने जो दो पपीते लिए थे, वे बाहर से ही दिखाई पड़नेवाली मेज पर तब

भी पड़े थे ।

बात बढ़ाए बिना दरोगा ने जेब से दो दसटकिया नोट निकालकर बाखर के हाथ पर धर दिए । दरोगा को लगा जैसे उसकी जेब खाली हो गई हो ।

हाकिम लौट पड़ा । बाखर और नामघरैया भी । नामघरैया ने बहुत आदरपूर्वक हाकिम से कहा, "सर, यदि समय हो तो हमारे नामघर में भी एकबार पधार... ।"

"क्या आज बिहु-सिहु कुछ है ?"

"नहीं साहब ! अपने मंदिर के भगवान को ही आपको दिखाऊंगा ।"

"तुम्हारे भगवान मुझे देखेंगे भला ?"

"जरूर देखेंगे सर, क्यों नहीं देखेंगे वे ?"

"अच्छा-अच्छा, होगा नामघरैया ! आज मैं दूसरे काम से आया हूं । कभी कुछ करना, तो मुझे बुलाना । जरूर आऊंगा ।"

नामघर के पास ही नामघरैया और बाखर को उतारकर हाकिम चला गया ।

रात सोते समय नामघरैया ने पत्थर के देवता को रिपोर्ट दी "नहीं पधारे, भगवान ! हाकिम को क्षमा करना ।" और करवट बदलकर आराम से सोते हुए फिर कहा, "तुम्हारी लीला भी अपरंपार है, भगवान ! खाने के लाले पड़े रुद्र को चोर बनाया, वह निर्लज्ज पत्नी को भरपेट खाना भी नहीं दे पाता । इधर हाकिम का मन इतना करुण बनाया, और वह दरोगा ? हे प्रभु, वह तो लड़के के मुंह का कौर भी छीनना चाहता था । मिल गई न सजा । सचमुच, तुम भी एक अचरज ही हो, भगवान ! एकदम मतलबी !"

3

"अरे ओ नामघरैया, हो कि नहीं ?"

"कौन, थोड़ा रुकिए, प्रभु ! मैं भात बना रहा हूं ।" नामघरैया ने रसोईघर से ही उत्तर दिया ।

"भात तो मैं भी खाऊंगा ।" अतिथि ने बाहर से ही कहा ।

"ठीक है प्रभु, आप तो दोपहर के भक्त हैं । बांटकर ही खा लेंगे ।" नामघरैया ने उत्तर दिया और फिर कहा, "उधर नामघर में ही बैठिए । आसनी रखी है मैं आ ही रहा हूं ।"

भात लगभग तैयार ही था । जलावन की कई लकड़ियां निकालकर नामघरैया ने चूल्हे की आंच कम कर दी । हाथ धोए, कंधे पर के गमछे से पोंछे और रसोई से बाहर आया । अब तक अतिथि नामघर में जा चुका था । हां, बैठा नहीं था । खड़े-खड़े नामघर की दीवार

पर की तस्वीरें देख रहा था। नामघरैया देखते ही चकित हो गया। "अरे वाह ! आज मेरा कैसा सौभाग्य है ! बड़े आदमी आए हैं। कहां से आ रहे हैं आप ?" पूछा और दीवार से टिकाकर रखी एक आसनी हाथ से ही झाड़ी और एक ओर बिछा दी।

सज्जन बैठ गए। काकोडोंगा के हैं। नामघरैया ने बचपन में ही देखा था। मामा के घर के पास के हैं। दो भाई हैं। दोनों को गांव के लोग बहुत पसंद करते। अवस्था अच्छी है। खेती-बाड़ी है। यह आदमी यहां क्यों आया है ? कुछ समझ न पाने के कारण नामघरैया ने नम्रतापूर्वक फिर कहा, "मैं जरा पानी बैठा आऊं।"

चूल्हे में आंच जलाकर पानी की केतली चढ़ाई और नामघरैया बाहर आ गया।

इस बार सज्जन ने ही कहा, "अचरज में पड़ गए हो न, नामघरैया ? वैसे मैं तुम्हारे पास ही आया हूं। चौक पर बस से उतरा और वहां से चलकर आया।"

"सीधे घर से ही तो ?"

"हां, सीधे...।"

"इस्स, तब ठहरिए। मैं भात का इंतजाम करूं।"

"कोई बात नहीं। तुम्हारे हिस्से में से भी होगा। न हो, तो भी कोई बात नहीं। बात यह है कि ...।"

"ठहरिए-ठहरिए। आप एक पल बैठिए। मैं झटपट इंतजाम कर आऊं। समय भी काफी हो चला है।"

निरुपाय अतिथि को बैठना पड़ा। नामघरैया ने फुर्ती से एक और आदमी के लिए थोड़ा चावल चढ़ा दिया। जब तक भात तैयार हो गया, झटपट एक कटोरी चाय ढाली और दूसरी छोटी कटोरी में गुड़ की डली के साथ अतिथि को दी और पूछा, "नहाना होगा न ?"

"नहीं नहाऊंगा, नामघरैया ! हाथ-पांव ही धो लूंगा। आजकल वह सब छोड़ दिया है। तुम जल्दी काम निपटा लो। तुम्हें एक जगह ले जाना चाहता हूं।"

"जाऊंगा, किधर ?"

"कहता हूं, तुम उधर देख आओ। मैं थोड़ा पानी पी लूं।"

नामघरैया रसोई में चला गया। इंतजाम के नाम पर कुछ भी नहीं था। हमेशा जिस तरह खाना होता है, बस वही। जगह निकालकर एक छोटी चटाई बिछाई और पत्ते लगा दिए। लोटे में पानी भरा और फिर बाहर आ गया। अतिथि से पूछा," प्रभु, पानी का लोटा यहीं ला दूं, या नदी पर जाएंगे ?"

"मैं नदी पर ही हाथ-मुंह धो आता हूं।" कहकर अतिथि ने कुरता खोलते-खोलते फिर कहा, "जानते हो नामघरैया, मेरा भाई चल बसा।"

"क्या कहते हैं आप, कब ?"

"तीन बरस हुए। चार लड़के-लड़कियां मेरे गले लटका गया। उसी के चक्कर में ... ?"

"हे भगवान ! पर चक्कर माने ?"

"लड़की ही बड़ी है। ब्याह की उम्र हुई। हुई माने पहले के हिसाब से देरी ही हुई। उसे ही यहां के डिब...।"

"हुआ-हुआ, समझा। लड़का शहर में काम करता है। उसी की बात कह रहे हैं न ?"

"हां तो।"

"आप हाथ-पांव धोकर आ जाइए।"

नामघरैया का दिया नया गमछा हाथ में लिए अतिथि बाहर चले गए।

लौटकर उन्होंने देखा कि एक छोटे पत्ते पर एक बीड़ा पान और एक सुपारी लिए नामघरैया नामघर के द्वार पर खड़ा है। अतिथि के नजदीक आते ही नामघरैया ने कहा, "जेब में एक का सिक्का है, तो दीजिए !"

अतिथि को आश्चर्य हुआ। फिर तुरंत अनुमान कर कि नामघरैया का मतलब क्या हो सकता है, आसनी पर खोलकर रखे कुरते की जेब से एक रुपया निकालकर नामघरैया के हाथ पर रख दिया। नामघरैया ने पान-सुपारी के साथ एक रुपया रखा और मणिकूट की तरफ बढ़कर अतिथि से कहा, "आइए तो।"

विग्रह के सामने जमीन पर एक हाथ बढ़ाकर नामघरैया ने पान-सुपारी का पत्ता रखा और घुटनों के बल प्रणाम की मुद्रा में अतिथि से कहा, "सरकार, ये आपकी और मेरी बातचीत का ख्याल कर रहे हैं...।"

बात का ढंग देख अतिथि चकित रह गए। वेदी के पत्थर के भगवान को ही नामघरैया 'ये' कह रहा है, यह समझने में थोड़ा समय लगा। नामघरैया कहता गया, "प्रणाम कीजिए। गांव का कोई भी काम इन्हें बताए बिना नहीं होता। आपका भी उद्धार करेंगे।"

अतिथि ने पहले वैसा कुछ सोचा न था। नामघर में ही दूर के परिचय का एक आदमी है, जानकर उसे मध्यस्थ के रूप में लाने की बात ही सोची थी। तो भी, नामघरैया को खुश करने के लिए हो, अथवा सार्वजनिक नामघर के कारण ही, अतिथि ने भी घुटनों के बल बैठकर प्रणाम किया।

"भात लेकिन एकदम छूंछा है, प्रभु ! बुरा मत मानिएगा।" पत्ते पर भात डालकर नामघरैया ने कहा। छूंछा का मतलब, इतना छूंछा होगा, ऐसा अतिथि ने सोचा न था। भात में ही पपीता है शायद, एक साथ सिझाया हुआ। बगल में थोड़ा नमक, और काहुदि[1]। या खारलि[2] चटनी थोड़ी-सी। शायद काहुदि ही हो, देखने में सफेद। और साथ में एक मिर्च।

---

1. सरसों की चटनी।
2. पुआल की राख से तैयार एक क्षारीय चटनी।

ऐसा भोजन कराते नामघरैया को थोड़ा भी संकोच न हुआ। इतने दिनों बाद भेंट हुई है। खाने की बात पर 'खाऊंगा' ही तो कहा था। लेकिन इंतजाम यही है।

अतिथि ने तृप्त होकर खाया। खिलाने वाले के आग्रह से वह भी स्वादिष्ट ही लगा।

खाना खत्म करते ही जाना ठीक न होगा, ऐसा ही दोनों ने सोचा। उधर लोगों के काम-धाम खत्म हुए होंगे या नहीं ? वैसे, गांव में उस तरह समय देखकर लोग निकला नहीं करते।

अतिथि ने घर की बात पूछी, लड़के की बात पूछी। भाई-भतीजे, वंश-परिवार की बात भी पूछी। नामघरैया भी कहता गया, अच्छा है, घर बहुत अच्छा है। असल में, नामघरैया को बुरा आदमी कहीं दिखाई ही नहीं देता। डिंब के सभी लड़के-लड़कियां आंखों के सामने बड़े हुए। आंखों के सामने बड़ी बेटी की शादी देखी। देखते-देखते बेटा पढ़ाई-लिखाई खत्म करके अब शहर में नौकरी कर रहा है। कहां, कभी कुछ बुरा तो नहीं देखा।

हां, एकबार घर पर मुसीबत जरूर आई। लड़के की बुआ विधवा हो गई। बेटे के साथ भैया के घर ही रहती है। उसका घर बहुत दरिद्र था।

"लड़की को मुसीबत में तो नहीं डालेगा न, यह भी अनाथ है ?" अतिथि ने बीच में पूछा।

"इस्स, क्यों डालेगा मुसीबत में, प्रभु ? किसी की बेटी को बहू बनाकर ? आप ऐसी बात एकदम मत सोचिए।"

डिंब घर में ही था। नामघरैया और नए आदमी को देखकर उसे संदेह हुआ। पिछले तीन महीने से ऐसे मेहमान उसके घर में आने लगे हैं।

"बबुआ ने कहा था, नामघरैया, तुम्हारे यहां कोई मेहमान आए हैं। वह साइकिल से लौटते समय शायद इन्हें ही नामघर जाते देखा था। आओ ! आइए महोदय !"

हो गई। शादी की बातें हो गई। खेत-खलिहान से धान घर में लाने के बाद ब्याह करना ही होगा। लड़की भी कहीं बाहर की नहीं थी। नामघरैया ने लड़की नहीं देखी। जब काकोडोंगा गया था, तब उसे ख्याल ही न रहा। जब प्रभु की भतीजी है, तब बुरी हो ही नहीं सकती। मैट्रिक पास है। घर संभालने में कुशल, बड़े चाचा के अनुसार।

"लगन देखना हमारे यहां ही होगा। पुरोहित जी देखते हैं। फिर भी, एक बार लड़के से पूछने की बात मां वगैरह से कहकर देखिए।" डिंब ने अपनी बात रखी।

'वगैरह' से मतलब निश्चय ही विधवा बुआ से है, अतिथि ने ऐसा ही समझा। बिना बाप की लड़की है, बखेड़ा न लगाए। बड़ी आशा लेकर इतनी दूर आया है। जितनी जल्द हो सके, काम हो जाना चाहिए।

"उससे मैं कहूंगा, भैया ! तुम चिंता मत करना। आज की शाम ही मैं उसे पकडूंगा।" नामघरैया ने आश्वासन दिया।

अतिथि से पूछताछ की जा चुकी थी। बात भी पक्की जैसी हो गई। असल में यह प्रस्ताव डिंब के पास पहले ही बाहर-बाहर से आया था। आज इस सीधी और घर के ही आदमी से बातचीत में असहमति की गुंजाईश ही न थी। अब तो केवल लड़का-लड़की की सहमति ही बाकी है।

"लड़की की सहमति की बात क्या रह गई है, भैया, जब लड़की के बड़े चाचा ही आए हैं। और अपने नव के कंधे पर जुआ मैं डालूंगा न !" वे दोनों नामघरैया की बात सुनकर हंस पड़े।

डिंब बीच में ही उठकर अंदर गया। पान-सुपारी और एक रुपया लाकर नामघरैया के हाथ में दिया और कहा कि सांझ के समय नामघर में एक दीया जला देना। नामघरैया ने हाथ तो फैलाया डिंब की ओर, पर देखा अतिथि की ओर। आंखों में प्रश्न था। देखा न ? मैंने कहा था न !

अतिथि बाहर आ गए। मन एकदम हल्का न हुआ। बात को पक्की तो कहनी होगी। फिर भी, लड़के की बात रह ही गई। उसे एक बार देख लेता।

"प्रभु, आज ठहर ही क्यों नहीं जाते ?" नामघरैया ने कहा। "नव को आपने देखा ही नहीं। उसे भी देखते जाइए।" मानो उसने अतिथि के मन की बात भांप ली हो।

"नहीं, नामघरैया ! आज चलूं। जब आश्वासन मिला है, तब छुट्टी का कोई दिन देखकर एक बार फिर आऊंगा।"

असल में आज तो केवल खबर करने के लिए आए थे। ... उसी दिन लौट पड़े।

"बहुत अच्छा हुआ, भगवान !" रात में सोते समय मंदिर के भगवान से नामघरैया ने कहा, "डिंब भैया का घर सूना-सूना लगता है। घर में एक नई लड़की ब्याहकर आएगी, तो सबके चेहरे पर हंसी खेलने लगेगी। और नव भी क्या ब्याह के लायक नहीं हुआ ?"

भगवान ने क्या उत्तर दिया, यह सुनने से पहले ही नींद ने नामघरैया को अपनी गोद में ले लिया।

नव ने पहले विवाह के मामले में आपत्ति की थी। उसने कहा कि विवाह की बात अब तक सोची ही नहीं।

"तू क्या हमसे पूछकर सोचेगा, रे नव ? जो सोचना है बाद में भी सोचते रहना। अभी तो मां-बाप को सोचने दे। भैया की कितनी इच्छा है कि एक बहू ब्याहकर घर में लाएं। दीदियां तो सुनते ही उड़कर आना चाहेंगी।" नामघरैया ने अकेले में भेंट होने पर नव को समझाया। उम्र होने पर मां-बाप को अच्छी जोड़ी देखकर विवाह कर ही देना चाहिए। यही तो असल बात है।

"या फिर तेरी लगालगी कहीं और है ?"

नव तड़प उठा। "तेरा बदन छूकर कहता हूं, नामघरैया ! वैसी बात मेरे साथ नहीं।"

"तो फिर एक दिन काकोडोंगा जा । किसी साथी को साथ में ले जा । हम खबर भेज देंगे । साथ जाए, तो कंठी को ले जा । वह अनुभवी लड़का है । तुझे भी अच्छा लगेगा ।"

बात तय हो गई । एक रविवार को अतिथि आए । साथ में अपना बड़ा लड़का और कन्या का भाई । सबको बहुत पसंद आया । नव से मिलकर उसे भी न्यौता दे आए । वह भी तय हो गया ।

पुरोहित ने भी तथास्तु कहा ।

धान पकने के बाद का दिन ठीक किया जाएगा ।

धान पकते-पकते गांव में बहुत कुछ घट गया । डिंब के घर में तैयारियां शुरू हो गईं । नामघरैया तो मध्यस्थ है ही ।

पर उससे क्या ? 'धान पकने तक' एक मुहावरा है, जिस पर नामघरैया ने भी ध्यान नहीं दिया था । औरों ने भी सोचा न था ।

एक दिन नामघरैया के सिर पर गाज गिर पड़ी । बिजली सीधे नामघरैया पर ही गिरी । लड़का सीधा नामघर तक दौड़ा आया । काकोडोंगा से उसे उसी तरह समझा-बुझा कर भेजा गया था ।

बातें कहकर ही लड़का लौट गया । कहते हैं, घर एकदम बर्बाद हो गया । मां बिस्तर पर है । कई दिनों से मुंह में एक बूंद पानी भी नहीं गया ।

नामघरैया अवाक रह गया । लपककर मणिकूट में चला गया । और मूर्ति की ओर देखते हुए रोनी सूरत से शिकायत की, "यह क्या किया, भगवान ? अब मैं किस मुंह से शादी तोड़ूं ?"

महा अनर्थ हो गया । कहते हैं, लड़की भाग गई । वह भी विधर्मी के साथ । कहते हैं, डेरगांव के एक मुसलमान लड़के के साथ पहले से ही गुप-चुप बातें हो रही थीं ।

सच हो या झूठ, अब इसकी पड़ताल का समय नहीं । यदि वैसा कलंक लग जाए, तो सब बर्बाद हुआ ही समझिए ।

लेकिन यह बात डिंब भैया से कहे तो कैसे !

विग्रह के सामने घुटनों के बल बैठकर इस बार नामघरैया ने भगवान को आदेश दिया, "मुझे निर्भय करो, भगवान ! कुछ कहने जा रहा हूं ।"

द्वार बंद करके, कंधे पर गमछा ले डिंब के घर की ओर चल पड़ा नामघरैया । वह अचरज में पड़ गया । सांस भी ठीक से नहीं ले पा रहा था ।

"भैया, यह शादी तोड़ दीजिए । हे भगवान !"

"क्या हुआ ओ पागल ! सुबह-सुबह तूने भांग-वांग तो नहीं खा ली, ओ नामघरैया ?"

"भांग नहीं खाई, भैया ! रात के आखिरी पहर में एक सपना देखा । कहूं, न कहूं, यही सोचते-सोचते इतनी देर हो गई । पर कहना तो पड़ेगा ही । मेरा ही सिर फोड़ डालिए भैया, पर यह ब्याह मत कीजिए । वंशीगोपाल भगवान की सौगंध है ।"

डिंब अचंभे में पड़ गया। अंदर से नव की मां भी आ गई। सभी नामघरैया को अव्वल पागल समझते हैं। वह वेदी के भगवान से अकेले में बातें करता रहता है, यह भी बहुतेरे लोग जानते हैं। उसे चिढ़ाते भी हैं।

तो भी, यह विनती दूसरी तरह की है। "अबे गधे, तूने क्या सपना देखा है ?" डिंब ने बात को हल्का-फुल्का बनाने के इरादे से पूछा।

"सपना तो मैं आपसे नहीं कह सकता भैया, पर किसी भी हालत में नव का अमंगल होने मत दीजिए। पुरोहित से सपने की बात कहूंगा। टीपन-मीपन मिलाकर उन्हें जो कहना होगा, कहेंगे। लेकिन यह ब्याह नहीं होना चाहिए, मैंने कह दिया।"

"अच्छा ही होगा, रुको, तू स्थिर हो ले। इतना आगे बढ़े, दिन-मुहूर्त ठीक किया। अब अचानक शादी नहीं करेंगे ! कह देने से ही होगा ! लड़की वाले से क्या कहूंगा ? क्या यह कहूंगा कि हमारे नामघरैया ने बुरा सपना देखा है कि नव की शादी नहीं होगी ? अरे लोग हंसेंगे !"

"हंसें ! उसका जिम्मा मेरा ! काकोडोंगा जाकर जो कहना है, मैं कहूंगा। आप केवल पांच रुपया मुझे दे दीजिए।भाभी, जाइए पांच रुपया निकाल लाइए। बस का भाड़ा लगेगा।"

"रुको नामघरैया, एक छोटी-सी बात के... ।" नव की मां को बात अच्छी नहीं लगी। पर उसने नामघरैया की ऐसी जिद भी पहले कभी न देखी थी। थोड़ी चिंता भी हुई।

"भाभी, होना है, तो एक छोटी-सी बात के कारण ही होगा। मैं ही लड़की वाले को लेकर यहां आया था। मैंने ही जिद की थी कि अनाथ लड़की को आपलोग बहू बनाकर ले आइए। अब मैं ही कह रहा हूं, यह ब्याह हो नहीं सकता। मेरा बदन तो देखिए, रोंगटे अब भी खड़े हैं।"

असल में बात रखने की उत्तेजना में ही नामघरैया के रोंगटे खड़े हो गए थे, अनदेखे सपने के डर से नहीं। नव के लौटकर आते ही उसे उसे नामघर भेज देने की बात कहकर नामघरैया लौट गया।

नामघरैया रास्ते में सोचता आ रहा था कि पुरोहित से पूछेगा, अमंगलसूचक सपना कैसा होता है ? दो-चार पूछ लूंगा और उन्हीं में से जो सबसे डरावना होगा, वही आज सुबह देखा, कहना होगा। नव को साफ-साफ कह देने पर भी वह गांव में प्रचार नहीं करेगा। गांव के लोग सुनेंगे तो ऐसे ही छिः छिः करेंगे। काकोडोंगा के लिए नामघरैया कल ही नव के साथ निकल जाएगा। दिन शहर में बिताएगा और वहीं से लौटकर बातें बना-बनाकर कहेगा कि कैसे शादी तोड़ आया। वह बात बना सकता है। वैसी झूठी बात नामघरैया को अपवित्र नहीं करेगी। कलंक के फैलने से पहले ही सारा खेल खत्म करना होगा।

शाम के समय नव को बात कहते समय नामघरैया को लगा कि उसका कलेजा फट पड़ेगा। जिस दिन से विवाह ठीक हुआ था, उसके मुखड़े पर रौनक आ गई थी। पर कहनी

तो होगी ही। वही ठीक से न जानेगा तो नामघरैया के दुःस्वपन का कोई मतलब ही नहीं। नव समझ जाए, तो मां-बाप को भी संभाल सकता है। और फिर, लड़कियों का कोई अकाल थोड़े है ? वह तो बड़ा प्यारा लड़का है।

"पर तू कह मत देना, नव ! मैंने खबर देने आए लड़के को भी मना कर दिया था कि लौटकर घर पहुंचने तक मुंह भी न खोले। गलती तो मेरी ही है। फिर भी, मैंने कहा था कि लड़की के बारे में कुछ भी नहीं जानता। घर की बात जानता था। मान लिया था कि जब उन लोगों की बेटी है, ठीक ही होगा। वही मुंह पर लात मारकर निकल गई। गांव में कुछ मत कहना, समझते हो ? तुमलोग दूसरों को सुना-सुनाकर मुझे ही गाली और शाप देना। जैसे मन हो, गाली बकते रहना। लेकिन तेरे पांव पड़ता हूं नव, कुछ मत कहना।"

नव चुपचाप सुनता रहा। नामघरैया सारे कलंक ढंकने के लिए, उसके विवाह की बात कहकर किसी को हंसने का मौका न दिया जाए उसकी व्यवस्था करने के लिए नामघरैया ने अपने आप को बलि का बकरा बना लिया है, यह बात भी नव समझता था। परंतु, बाप की उम्र के नामघरैया ने उसी काम से जब नव के पैर पकड़ने की बात कही, तब वह उछल पड़ा, "क्या करते हो, नामघरैया... ?"

जब नामघरैया इतनी बड़ी बात में रुकावट डाल रहा है, तब जरूर सपना डरावना होगा। भला वह नव या घर का अमंगल होना सोच सकता है ?

नव ने जब खुद मां-बाप दोनों को सुनाकर दृढ़ता से कहा कि उस घर में शादी नहीं करेगा, तब उनकी बुद्धि चकरा गई। यह पागल नामघरैया अनर्थ की जड़ होने पर भी कभी किसी का बुरा नहीं सोचता।

आपद-अमंगल दूर करने के विचार से नामघर में शराइ[1] चढ़ाने की बात निकली, तो नामघरैया ने हामी भर दी। "हां, नैवेद्य चढ़ाया जाए। भगवान ने पहले ही सपने में हमें सचेत कर दिया, इसीलिए उन्हें प्रणाम किया जाए। किसका कहां क्या हो जाए, वही जानते हैं।"

"हे भगवान !" रात को सोते समय चटाई फैलाकर नामघरैया स्थिर बैठ गया। मणिकूट का द्वार खुला था। एकटक पत्थर के देवता की ओर देख रहा था।

"किसी का कहीं बुरा न हो, इसीलिए कहता हूं। इस बार मुझे इतना ओछा क्यों बना दिया ? या तुम्हारे प्रति कोई भूल हो गई ?"

नामघरैया का गुस्सा देखकर पत्थर के भगवान के मुख पर वह हंसी ही तो नहीं !

"हंसते हो। अब तुम और कर ही क्या सकते हो ? मजा लूटने के लिए ही उसे भी पैदा किया। उसे भी एक मन दिया। लड़का मुसलमान हुआ तो क्या ? वह भी हाड़-मांस का आदमी है। पाने दो भगवान, उन्हें भी सुख पाने दो। भगवान ! लड़का-लड़की को मुसीबत में मत डालना।" कहकर नामघरैया सोने लगा कि उसे याद आया। शायद किसी

1. नैवेद्य का पात्र।

बरसात की बात है। उधर से फूस के बोझे से ठसाठस भरी एक नाव जा रही थी। नामघरैया नहाने के लिए नदी में उतरा था। मांझी धारा की दिशा के थे शायद। पतवार चलाने वाला मांझी मस्ती में गाए जा रहा था–

एमन मन मोर करेंरे विधि, एमन मन करे।
मनेर मतन चेंरा देखि धइर्या पालां दूरे।
केह कैव कलंकिनी, हानि नाइक ओते।
मनेर साधे कैरव केलि, पति निया साधे।

"सच ?" नामघरैया ने मांझी से पूछा था।

4

नामघरैया अकेले-अकेले भुनभुना रहा है और काम भी करता जा रहा है। इस बार वह उल्टी गंगा बहाएगा। मणिकूट से पूरब थोड़ी जमीन है। उसी में गोभी के पौधे लगाएगा। एक ओर बेला और टगर फूलों के कई पौधे हैं ही। जमीन पर जरा चौड़ी पट्टी निकालकर नामघरैया गोभी और मिर्च रोपना चाहता है। जो होना होगा, होगा। उसी का घेरा बनाना है। सुबह-सुबह ही लज्जित होकर आया है। "अजी, मैं तो रास्ते की ओर झुका हुआ बांस ही जड़ से काटकर लाना चाहता था। पर हेमकांत ने नहीं दिया।"

उसने कहा, "नहीं नामघरैया, वे सारे बांस खूंटे के काम आएंगे।"

"वाह ! सारे बांस क्यों काटते ? नामघरैया, नामघर से सटा ही एक घेरा बनाना चाहता है। उसके लिए भी बांस देने का दम न हुआ हेमकांत को ?– कता अधरमी निपात जाषि सेइटो आक्रोह होले... ।"

पंक्ति कहकर ही नामघरैया रुक गया। धत, उसके मुंह से वैसी बात निकलनी चाहिए ? "क्षमा करना, भगवान... !" नामघरैया ने मणिकूट के अंदर वेदी के भगवान को लक्ष्य कर विनती की। "मेरी बातों पर ध्यान मत देना। जवान लड़के की मौत क्यों होगी ? छिः, मेरा भी क्या मुंह है ? सिर के बाल जितनी उम्र हो उसकी। केवल उसी की क्यों, सभी लड़कों को मेरी उम्र लग जाए।" कहते हैं कि हेमकांत ने बांस बेच डालने का निश्चय किया है। जागीरोड की कागज मिल को चाहिए। आदमी तलाशते आ गया है। अच्छा दाम मिलेगा।

उसी बात पर तो गुस्सा उठा नामघरैया को। हेमकांत ने नामघरैया को क्या समझ रखा है ? कागज मिल में बांस का खूंटा लगाने की बात से वह क्या जताना चाहता है ?

उसकी छावनी जाति-बांस की है ?

कुदाल चलाते हुए मुंह से बुदबुदा भी रहा था, कि रास्ते से जा रहे बबुआ ने वे बातें ठीक से सुनी। कागज की मिल में बांस का खूंटा ! हंसी रोक न पाने के कारण बबुआ एक ही सांस में हेमकांत के घर पहुंच गया। हेमकांत का पेट भी हंसी से दुखने लगा।

चारों ओर शोरगुल मचा हुआ था।

शनिवार का दिन ! शाम को नाम कीर्तन। उपेन वगैरह का अष्टयाम था। नवयुवक लोग अड्डा मारने के लिए ही इकट्ठा होते। उस दिन एक बात भी मिल गई।

प्रवीण ने बात शुरू की, मानो वह अनजानी बात जानना चाह रहा हो। उसने टंक से पूछा, "है न भैया, कागज मिल बांस पर खड़ी की जाए, तो अच्छा होगा न।"

टंक को पहले से कुछ भी मालूम न था। इसीलिए अचरज में पड़कर उसने उल्टे प्रश्न किया, "बांस के खूंटे पर कागज मिल की क्या बात पूछते हो ?"

प्रवीण ने आंखों से इशारा किया और फिर कहा, "यह हेमकांत कहता है कि वह रास्ते के किनारे के बांस बेच डालना चाहता, क्योंकि कागज मिल को जरूरत है। आज तो उसने नामघरैया को भी बांस मांगने पर कह दिया कि एक भी नहीं दे सकता।"

पीछे से अकन ने कहा, "वह बांस तो जाति-बांस[1] है। मजबूत खूंटे के लिए क्या भलूका बांस[2] का अकाल पड़ गया है ?"

"कागज की ही मिल है, समझते हैं न भैया, शायद छोटी होगी।" किसी ने आवाज बदलकर एक की ओट से कहा।

किसी और ने जोड़ा, "हेमकांत का जाति-बांस इतना ही अच्छा है कि उसी के बांस से कागज मिल खड़ी की जानी चाहिए।"

बात भटकी जा रही थी। दो-एक लोग हंसी रोक न सके और खीं-खीं कर हंस पड़े। एक ने आखिरी तीर छोड़ा, "अरे हेम, तूने किस साहस से उस बांस में से एक भी नामघरैया को नहीं देने की बात कह दी ?"

उपेन ने आपत्ति की। "हुआ, बहुत हुआ। छोड़ो वह सब। तुझे ये लोग चिढ़ा रहे हैं, समझते हो, नामघरैया ? तू चुपचाप रह।"

नामघरैया ने एक अनुमान लगाया। रात में किसी से नहीं पूछा। सुबह विग्रह को स्नान कराने के लिए आने पर पुरोहित से पूछा, "कागज मिल में जाति-बांस की क्या जरूरत पड़ती है ?"

पुरोहित को पिछली रात की बातें मालूम हो गई थीं। नामघरैया को डपटकर कहा, "तू अनसुनी-अनजानी बातों में टांग अड़ाने जाता ही क्यों है ?" उसके बाद पुरोहित ने समझा दिया कि मिल में बांस का खूंटा नहीं लगाते। उससे कागज ही तैयार करते हैं।

---

1. असम का छोटे आकार का सुलभ बांस।
2. बड़े आकार का मजबूत बांस।

नामघरैया जानता है कि बांस काट-फाड़कर फट्टे-फट्टियां तैयार कर एक-से-एक चीजें बनाई जा सकती हैं। लेकिन उससे कागज ? पुरोहित ने एकबार डपटा और फिर, जितना संभव था, उतना सहज होकर समझा दिया कि बांस से कागज कैसे तैयार होता है

तुरंत नामघरैया के मुंह से निकल गया, "तब तो देश में जितनी भी बांस-बाड़ियां हैं, उन्हें बर्बाद कर डालेंगे।"

इसके बारे में पुरोहित ने कुछ नहीं कहा।

सात दिनों बाद सच ही देखा गया कि हेमकांत आदमी लगाकर बांस कटवा रहा है। कटवा रहा है, माने एकदम उपाट रहा है और आदमी सबको बराबर टुकड़ों में काट-काटकर रास्ते के किनारे टाल कर रख रहा है। नामघरैया कुछ पूछने के ख्याल से दो डग आगे बढ़ा भी, पर फिर ठहर गया। क्या पूछना चाहे और क्या पूछ बैठे ! दो या तीन दिन बाद की बात। सिर पर गमछा बांधकर नामघरैया मिट्टी छील रहा था। रुद्र चोर रास्ते से जा रहा था। उसने नामघरैया को देखा तो नजदीक आ गया और बेड़े से टेढ़ा टिककर पुकारा, "क्या कर रहे हैं, नामघरैया भैया ?" नामघरैया ने सिर उठाया तो देखा रुद्र। बाखर जब से हाट जाने लायक हुआ है, तब से रुद्र नामघरैया को 'भैया' कहने लगा है।

"क्या हुआ प्यारे, जेल से तुम्हारा मन भर गया क्या ?"

"इस बार तो कब का आ गया, भैया ! आप उस जमीन में क्या लगाना चाहते हैं ?"

"सोचता हूं कि बीसेक ओल रोप डालूं। बहुत जतन नहीं करना पड़ेगा। कुछ बैंगन और मिरचाई भी रोपूंगा।"

"पौधे ले आए ?"

"ले आया। क्यों ?"

"मिल जाए, तो मैं भी कुछ रोप डालूं।"

नामघरैया रुक गया। उसे अपने ही कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था। पूछा, "ओ रुद्र !"

"क्या ?"

"बत्तख देखी है न !"

"हां।"

"बत्तख के पंख तो तुमने देखे ही होंगे। फिर भी, मैंने उसे उड़ते नहीं देखा कभी।"

"इस्स भैया, आप भी !"

"हां, तू वही है। हाथ हैं, पांव हैं, मनुष्य की काया... । खैर छोड़ो, बाकी नहीं कहूंगा। तू सेंध लगाने के अलावा भी कोई काम जानता है भला ?"

"क्यों नहीं जानता, भैया ? आप कोई काम दीजिए तो।" नामघरैया को लगा कि रुद्र आजकल कुछ लजाने लगा है। "अच्छा-अच्छा, देखूंगा तभी भरोसा करूंगा।" कहा और रुद्र को जाते हुए देखता रहा।

शाम को रुद्र फिर आया। नामघरैया इधर से छुट्टी पाकर रसोईघर में चला गया था। पूछा, "भैया, भात तैयार हो गया क्या ?"

"अरे वाह ! रुद्र ! तू काम पर निकल ही पड़ा है ?"

रुद्र ने व्यंग्य समझा, फिर भी उसके बारे में कुछ न कहा। दरवाजे के सामने ही एक चटाई थी, उसे ही बिछाकर बैठ गया।

"भात चढ़ाया ही नहीं है। बाद में होगा। तेरा क्या हुआ, जो रात में आया है ?" नामघरैया ने पूछा।

"एक जरूरी काम है। आप अपना काम करते रहिए। मैं बाद में कहूंगा।" कहकर बेड़े से टिककर अच्छी तरह बैठ गया। फिर कहा, "देखूं, जरा दीया तो दीजिए, भैया !"

दीया रुद्र की ओर बढाते हुए पूछा, "दीये से क्या करोगे ?" रुद्र ने कमर की गांठ से एक बीड़ी निकाली और दीया उठाकर जलाई। "भैया, आप तो बीड़ी नहीं पीते ?"

"नहीं, मैं वह सब नहीं करता। लगता है, तू बाखर की जेब मारकर पैसे ले आया है बीड़ी खरीदने के लिए !"

"नहीं-नहीं, पैसे मेरे ही थे।"

"तेरा तो रहा ही होगा। तेरा पैसा कौन खाता है ? बच्चे-बच्चियां भी भूखों ही रहते हैं।"

"आप भी, भैया... !"

"अच्छा ठहर, ठहर रुद्र ! रख, दीया जमीन पर ही रख।" रुद्र ने दीया रख दिया। "हां, अब तू अपनी हथेली दीये की लौ से लगा।"

रुद्र आश्चर्य से नामघरैया के चेहरे की ओर टकटकी लगाए देखता रहा। क्या कह रहा है यह आदमी ! "अरे, हाथ जलाने के लिए क्यों कहते हो ?"

"क्या इससे पहले तुम्हारा हाथ इस तरह जला है ?"

"नहीं तो, पर इसीलिए...।"

"मतलब कि तू जानता है कि आग में हाथ डालने पर जल जाएगा।"

रुद्र को हंसी आ गई। लोग नामघरैया को इसीलिए तो पूरा पागल कहते हैं।

"पहले कभी भी आग में हाथ नहीं जला, फिर भी तू जानता है कि आग में हाथ डालने पर जलेगा। और फिर, सेंध मारने का खात्मा हो जाएगा, है न ?"

"अरे भैया, जान-बूझकर दीये की लौ में हाथ डालकर क्यों देखूंगा भला ?"

"वही तो कहता हूं। आग में हाथ डालने पर जलेगा, सो तो तू जानता है पर ओ गधे, तू यह क्यों नहीं जानता कि चोरी में पकड़े जाने पर तू तो आराम से जेल में दोनों शाम खाना खाएगा, लेकिन इधर घर-परिवार को तकलीफ झेलनी पड़ेगी ?"

नामघरैया बातों को ऐसा मोड़ देगा, रुद्र ने सोचा न था। एक पल चुप रहा और फिर धीमी आवाज में कहा, "वही तो आपसे कहने आया हूं, भैया !"

नामघरैया अपना काम कर रहा था।उसने वहीं से पूछा, "क्या कहना चाहता है ?"

"हेमकांत अपने बांस के अलावा गांव के दूसरे लोगों के बांस भी कटवा रहा है। वह बाहर से मजदूर लगा रहा है। मैं भी काट सकता हूं।"

बात तो सही है। नामघरैया ने देखा है कि कहीं दूर से कई आदमी आए हैं। वे लोग बांस काटते भी हैं फटाफट। आराम करते ही नहीं। अजी बात तो सोचने लायक है।

"पर कामचोर, तू वह काम कर सकेगा ?"

"मिले तो क्यों नहीं कर सकता, भैया ?"

"कर सकोगे, समझता हूं। जेल में कोई बिठाकर खिलाता है भला !"

नामघरैया मन में एक दूसरी बात ही सोच रहा था। थोड़ा ठहरकर उसने कहा, "अच्छा, तू जा। खा-पीकर आ जाओ। रात में एक काम करेंगे। होगा, तुम्हारा काम भी होगा। शनिवार के कीर्तन तक रुकना पड़ेगा।"

"रात में क्या करेंगे ?" रात में रुद्र तो अपना काम करता ही है। पर नामघरैया के साथ रात में आखिर कौन काम हो सकता है ?

"आते समय तू अपना हथियार भी लेते आना। समझता है न, खंती ?"

रुद्र की आंखें फट गईं। नामघरैया का स्वभाव बदल तो नहीं गया !

कीर्तन के दिन ऐसी भीड़ उमड़ी, मानो दुनिया ही इकट्ठी हो गई हो। उस दिन रमा का अष्टयाम था। उनलोगों ने चाय-पान का बंदोबस्त किया था। पिछले दिन की तरह ही बेसिर-पैर की बातें छिड़ीं। देश-विदेश की खबरों का मंथन हुआ। एक या दो बार नामघरैया को चिढ़ाया भी गया। पुरोहित जी बीमार हैं, वह बात भी निकली। रमा ने इसका जिम्मा लिया कि शहर से दवा ला देगा

उसके बीच ही सबको अचरज में डालते हुए नामघरैया ने गले में गमछा लपेटा और घुटनों के बल बैठ गया। सामने एक पत्ते पर एक पान और एक सुपारी रखे हैं।

यह नामघरैया का नया रूप। एक ही साथ कई लोगों ने पूछा, "अरे, इसे आज क्या हुआ ? क्यों कर रहे हो दंडवत, नामघरैया ?"

"समाज के सामने घुटने टेक रहा हूं, एक न्याय होना चाहिए।"

"न्याय ? तुझे किसने क्या किया ?" कोई कुछ समझ न पाया।

"हे पंच परमेश्वर ! एक बांस-चोर का न्याय होना चाहिए।"

"बांस-चोर ! तेरा बांस है कहां, किसने चुराया ?" एक साथ ही कई लोगों ने पूछा।

"जरूर हेमकांत ने।" हंसकर किसी ने कहा।

"यह हेमकांत को यूं ही छोड़ नहीं देगा। ओ नामघरैया, तुम्हारे कितने बांस चुराए ?"

"इस्स राम ! ठहरिए, मेरे बांस हैं ही कहां ?" नामघरैया ने ऊंची आवाज में कहा।

"तो फिर ?"

"बांस तो हेमकांत का ही चुराया गया। उसने जो बांस कटवाकर रखे थे। उसी में से कई नीचे के हिस्से, जड़ सहित...।"

हेमकांत था ही। उसने कल्पना भी न की थी कि उसके कटाए बांस के टाल से कोई एक टुकड़ा बांस चुरा भी सकता है। वह उठ खड़ा हुआ और उसने गुस्से में पूछा, " किसने चुराया, ओ नामघरैया ?"

"रुद्र ने।"

"अच्छा, तो अब रुद्र चोर बांस पर लग गया है !" किसी ने कहा। नामघर में रुद्र भी था। नामघरैया ने उसे बुलवा लिया था।

वह एक तरफ कोने में दुबककर बैठा था। अब उसे भय हुआ। पता नहीं, अब वह क्या करे ?

दो नवयुवक यों ही खड़े हो गए। "कहां बेचा रे, चोर ? बोल।"

"नामघरैया, तुमने कैसे जाना कि रुद्र ने बांस चुराया है ?" इस बार एक छोटे लड़के ने पूछा।

"मैं भी साथ में था।"

सब ठहाका लगाकर हंस पड़े। बात का मतलब न समझ पाने के कारण विपिन भैया ने सबको धमकी दी। उस दिन वे ही सबमें बड़े थे। इसी बीच किसी ने कहा, "इस बार मरा। नामघरैया रुद्र चोर का साथी हुआ।"

"ठहरो-ठहरो, तुमलोग ठहरो। अरे नामघरैया, क्या बात है, साफ-साफ कहो तो। और यह दंडवत किसलिए ? वह भी कहो।"

थोड़ा आश्वासन पाकर नामघरैया ने सारी बात विस्तार से बताई। हेमकांत बांस का ठेका लेकर गांव से बांस को उपाट ही डालना चाहता है। इसीलिए नामघरैया ने रुद्र चोर के साथ हेमकांत के काटकर रखे बांस के टाल से जड़-सहित छह टुकड़े चुनकर चुरा लिए।

"वह सब कहां बेचा ?" गजेन ने पूछा।

"कहीं नहीं बेचा। उसे खरीदेगा ही कौन ? हमने जगह देखकर छह जगह उन्हें रोप दिया है। जमता है या नहीं, कह नहीं सकता। रातों रात गोबर-पानी डाल दिया है। और...।"

"और... ?"

"और अब समाज को हमारा अपराध क्षमा करना है और साथ ही हेमकांत को सजा देनी चाहिए।"

"अरे, तू पगला है, सो सब जानते हैं। हेमकांत का ही बांस चुराया और उसे ही सजा देना चाहता है।"

"उसे ऐसे कई टुकड़े अलग करके रख देने चाहिए थे, जो लग सकें। और...।"

"और क्या है ?"

"और हमने जो कई टुकड़े रोपे हैं, उसमें बाड़ लगाने के लिए काटे हुए बांस की करचियां देनी चाहिए। और ...।"

"फिर और !"

"हां, हमारे गांव में ही बेकार बैठे रहनेवाले रुद्र, बुद्धूराम, गुमाई इत्यादि के रहते हुए भी बांस काटने के लिए दूर से आदमी लाया है, उसे उसके लिए भी सजा मिलनी चाहिए।"

अब जाकर बात सबकी खोपड़ी में धंसी। पर हेमकांत घबरा गया। ये तो काम करने से रहे। पैसे यूं ही देकर घाटा क्यों सहेगा ?

नामघरैया ने फिर सिर झुकाया। "हेमकांत दो दिन काम करवाकर देखे। मन मुताबिक न करे, तो सबके दो-दो टुकड़े कर डाले।"

सब फिर हंस पड़े। "तेरे पास दाओ है रे ?"

"नहीं है तो क्या ? जरूरत पड़ने पर उन्हीं लोगों का ले लेगा।" किसी ने निर्णय सुनाया।

नामघरैया ने आज जिस ढंग से बातों को प्रस्तुत किया, उससे सब प्रमुदित हुए। हेमकांत का मन भी न बदला हो, ऐसी बात नहीं। बांस दूसरी जगह भी रोपा जा सकता है, वह बात किसी ने उसे समझाकर कही न थी।आज वही बात नामघरैया इस तरह कह देगा, उसने सोचा भी न था। लेकिन इस समय रोपने पर बांस लगेगा भला ?

"तूने जड़ें कहां-कहां रोपीं ?" हेमकांत ने पूछा।

"दो तुम्हारी ही पश्चिमी मेड़ पर। एक पुरोहित के खर खेत की बगल मे, एक बाखर की मेड़ पर। दो मज[1] के उस पार। उसे तो इस बार माघ बिहु में काट ही डालेंगे।"

"किसने कहा तुझे कि उसे काटेंगे ?" नंद लगभग उछल पड़ा। यह उछलने की बात ही थी। उसी ने बाकी लोगों के साथ राय की थी कि मज इस बार मेजि[2] में जलाएगा। अब उसने समझा कि नामघरैया को सुनाकर राय करनी ही नहीं चाहिए थी।

नामघरैया अचकचा गया। उसने भी सोचा न था कि यह बात खुल जाएगी। बातों को मोड़ देने के लिए उसने क्या कहा, कोई समझ ही न पाया।

शायद संध्या की गहमा-गहमी के कारण ही नामघरैया को थोड़ी थकान महसूस हुई। पाटी बिछाकर लेटने की कोशिश करते ही उसने ताबड़-तोड कई जम्हाइयां लीं। लंबी तान ली और बदन पर कंबल ओढ़ लिया। नव ने ब्याह के समय कंबल नामघरैया को दिया था।

"हमारे लड़के लोग बड़े भले हैं, ओ भगवान।" वेदी के भगवान को नामघरैया ने आज की बातों से अवगत कराया।

"उनलोगों को सकुशल रखना। बेचारा हेम, ठेके में नया-नया हाथ दिया है। नुकसान

1. एक लंबा पेड़।
2. माघ बिहु की पूर्व-रात्रि होलिका दहन की तरह जलाया जाने वाला लकड़ियों का ढेर।

मत होने देना, भगवान। और इन निर्लज्ज, आलसियों के बदन में ताकत देना, प्रभु ! जिससे वे काम-धाम कर सकें।"

एक और जम्हाई ली उसने।

"और विनती करता हूं भगवान कि बांस की जड़ें जम जाएं। उन्हें सूखने मत देना, हां। तो आज अब सोऊं ?"

'सो जा' पत्थर के भगवान ने आदेश दिया।

असल में शाम के कीर्तन के प्रसाद की कुछ दाल टोकरी में ही लगी हुई थी। दो पत्तों पर उलटकर रखी हुई टोकरी में चूहा उछल-कूद कर रहा था। खटर-पटर की एक आवाज हुई। नामघरैया को तंद्रा की स्थिति में वही 'सो जा' बनकर सुनाई पड़ी।

"कौन ? कौन है बाड़ी में ?"

5

"अरी मुई, चुपचाप रह। मैं हूं, मैं, नामघरैया।"

"हे भगवान ! तू अंधेरे में ही आ गया !"

"तुमने जूठन और बुहारन फेंककर जो गंदा कर रखा है, उसे नहाने से पहले साफ-सुथरा ....।"

"तभी तो तू आता है रे ! जाते समय सेम के कुछ गुच्छे तोड़कर ले जाना।"

"हुआ-हुआ। मैं सेम तोड़कर ले जाऊं और पीछे-पीछे तेरा प्रेत मुझे खदेड़े। जरूरत नहीं। देना है तो बाखर को ही दे देना एक टोकरी। हाट ले जाएगा।"

"वह तो दो बार हाट के लिए ले गया है।"

"तूने उसका टेंटुआ दबाकर पैसा ले लिया होगा।"

"नहीं लिया पैसा। एक टोकरी के लिए एक रुपया देने की बात कही थी। वह खुद ही दे देगा। उसने गुल्लक में चूना से बिजूका बनाया और रुपया डालकर वह उधर रख दिया है।"

नामघरैया ने सिर उठाया और पके गुल्लक का बिजूका देखा। नजर न लगे, इसीलिए बनाया गया है।

"अरे वाह, वह तो एकदम तेरे चेहरे जैसा है, मेसू की मां... !"

"इस मुआ को हैजा...।"

"सुबह हुई भी नहीं कि तूने मुंह गंदा कर लिया। है न ?"

उधर बूढ़ी खामोश हो गई। नामघरैया अगले दिन दोपहर में हंसिया लगा लग्गा लेने आया। उसने पूछा कि क्या काम है। उस ओर सेमल के पेड़ की फली फटने लगी है। रूई के एक-दो फाहे हवा में तैरते देखे गए हैं। बूढ़ी ने कहा कि वही एक झोला तोड़कर ले आए।

"वाह, रूई पर सोने का मन हो रहा है तेरा ?"

"यदि मैं रुई के तोशक पर सो ही गई तो तुझे डाह क्यों ?"

"सो-सो, ओ मेरी मौसी, रूई पर ही सो। पर क्या इस भरी दोपहरी में बिना गए बात न बनेगी ?"

"लेकिन बाद में समय नहीं मिलेगा। अभी ही चलना होगा।" कहकर लग्गी लेकर नामघरैया चलने लगा तो बूढ़ी ने कहा, "समय निकाल कर मेरा भी एक काम कर देना ओ नामघरैया।"

"क्या ?"

"उस सेम की लत्ती का मचान थोड़ा बड़ा कर देना है। बांस के कई खूंटे हैं। उसी से फटिट्यां भी निकल जाएंगी।"

"अच्छा ठीक है। एक दिन आऊंगा।"

"जल्दी आना। देखो तो, एक तरफ लत्ती जमीन तक लटक रही है।"

नामघरैया ने देखा, बूढ़ी का हाथ बहुत सगुनिया है। सेम फली भी खूब है। बूढ़ी सुबह-शाम बर्तन-बासन धोकर पानी इधर ही फेंक देती। नहाने से पहले काम पूरा करना होगा।

बूढ़ी भी जानती है कि नामघरैया सेमल की रूई अपने लिए इकट्ठा करने नहीं गया है। जरूर पुरोहित को देगा। आदमी एकदम दीवाना है। अपनी कोई बात सोचता ही नहीं। किसी और पर कोई मुसीबत आ जाए, तो एकदम पिल पड़ेगा। यही देखो, भोर हुआ भी नहीं कि बूढ़ी के काम में लग गया है। उधर नहा-धोकर नामघर के अंदर के काम भी समय पर करने होंगे।

बूढ़ी बहुत पहले ही जग गई थी। बिस्तर से नीचे आई भी न थी। यह कमरा अब तक भीतर से ही बंद था।

यूं भी बूढ़ी बहुत चौकन्नी है। बाड़ी के किसी कोने में खरखराहट होते ही जग पड़ती। "कौन, कौन है उधर ?" बिस्तर से ही कड़ककर पूछती। गीदड़ या कुत्ता होता तो चुपचाप खिसक जाता।मेसू समर्थन में एक धीमी 'म्याऊं' की आवाज लगाती।

बूढ़ी निश्चिंत हो जाती। मेसू बूढ़ी की एकदम अपनी है। घर की रखवालिन। उसके सिवा बूढ़ी का कोई और नहीं। बाड़ी में अनगिनत चीजें हैं। बाड़ी छोटी भी नहीं। मौसमी साग-सब्जी सब लगाई गई है। वह पान के चार पौधों की भी बहुत देख-भाल करती। वे पौधे बूढ़ी की बड़ी संपत्ति हैं। फागुन-चैत महीने में एक मुट्ठी का एक रुपया तक पाती।

हाट के लिए पान खरीदने वाले किसी आदमी ने बूढ़ी से एक लग्गी बनवा ली थी। जब से बाखर हाट जाने लगा है, प्रायः उसी को दिया करती पान।

इस बार उसने कद्दू और सेम लगाए। माघ बिहु से पहले एक-एक कद्दू का अच्छा दाम मिला।

लेकिन इस अपार संपत्ति का भोग करने वाला ही नहीं था बूढ़ी का। इसीलिए गांव वाले बूढ़ी को बांझ कहते। नामघरैया ने बूढ़ी को 'मेसू की मां' नाम दिया है।

मेसू बूढ़ी की पालतू बिल्ली है। बिल्ली है, तो क्या ? उसकी बड़ी प्रसिद्धि है। है भी कद्दावर। छोटे-मोटे कुत्ते को भी खदेड़ देती है। बूढ़ी को इधर-उधर जाना होता तो बिल्ली को कहकर जाती–"अरी ओ मेसू, मैं जरा होरूधन के घर से आऊं, तू घर देखना।"

मेसू दरवाजे के सामने पांव मोड़कर पड़ी रहती। कहीं कौआ या मैना भी बैठती तो मेसू उछलकर खड़ी हो जाती।

कभी बूढ़ी को थाली में भुनी हुई मछली रखकर बाहर जाना होता, तो भी मेसू को कहकर जाती, "मछली रखी है, मेसू ! भूनी हुई है। लौटकर एक साथ खाएंगी। ओ ! तू जरा देखना।"

मछली जस की तस रहती। बूढ़ी तीन-चार घरों में पैसे का तकादा कर आती।

एक दिन की घटना लोगों की जुबान पर है। बात इतनी फैल गई कि आजकल मल्लाहिनें बूढ़ी को मछली दिखातीं भी तो भगौने का ढक्कन एकदम हटा नहीं देतीं। थोड़ा-सा उठकर बूढ़ी से कहतीं, "देखिए चाची, यदि देखना है, तो इसी ओर देख लीजिए।"

घटना ऐसी थी। एक दिन एक मल्लाहिन बूढ़ी को ढक्कन पर मछली रखकर दिखा रही थी और दाम कर रही थी। ऐसे ही समय कहीं से एक मस्त बिल्ली आई और किस पल झपट्टा मारकर एक मछली ले भागी और बाड़ी के कोने की घनी झाड़ी में चली गई। कोई समझ ही न सका। मल्लाहिन 'हाय दैया' करती खदेड़ती गई, पर बिल्ली को देख ही नहीं पाई। 'हाय राम, हाय राम' करती मल्लाहिन चली गई। बूढ़ी ने भी मल्लाहिन का घाटा देखकर कह दिया कि मछली नहीं खरीदेगी।

जब मल्लाहिन ओझल हो गई, तो बूढ़ी ने आवाज लगाई, "देखूं, ले आ मेसू ! क्या हाथ लगा, देखूं !"

मेसू सहमते हुए आई। मुंह में एक छोटी कतरी मछली। "वाह, क्या अच्छी मछली मारी तूने आज।"

इस घटना में कहां-कब-कितना नमक-मिर्च लगा, कोई नहीं जानता। बाद में नामघरैया के लिए बूढ़ी के नाम 'मेसू की मां' ने सारी घटना पर पर्दा डाल दिया।

मेसू की मां की कृपणता की कहानी का कोई अंत नहीं। कोई कहता कि एक मिर्च

सात दिनों तक खाती। थाली की किनारी में घिसकर रख देती। बाद में जब लचीला डंठल टूट जाता और घिसना संभव नहीं रहता, तब बचा टुकड़ा खा डालती।

चीनी चंपा केले का एक घौद लगा था! नामघरैया ने एक गुच्छा कीर्तन में देने के लिए कहा तो तीन या चार केले तोड़कर दे गई।

बनाकर कही गई बातें भी बहुत हैं। बूढ़ी के मरने पर जब बाड़ी परित्यक्त हो जाएगी, तब वहां भूत का वास होगा। ऐसे भी बाड़ी एक कोने पर है। रास्ते के किनारे पर। रात-विरात उधर से लोगों का जाना बंद हो जाएगा। कद्दें नींबू चुराने आनेवाले के कंधे पर भूत सवार हो जाएगा।

बूढ़ी के कोई नहीं। नहीं माने मुंह में एक चुल्लू पानी देनेवाला तक नहीं। इसीलिए नामघरैया ने सलाह दी थी कि कहीं से किसी लड़के को शरण देकर अपना बना ले। पर नहीं, बूढ़ी वह सब नहीं चाहती। अकेले सारी दुनिया में फुदकती फिरती। रूपी में दस बीघा जमीन है। सनातन को अधिया पर खेती करने के लिए दी थी। पिछले साल उसने धान कमा दिया। पता नहीं, इस बार क्या करता है। एक दिन नामघर के सामने से जा रही बूढ़ी ने नामघरैया से सारी बातें कही थीं। बूढ़ी ने विनती की कि वह एक बार उससे कहे पर नामघरैया ने जहर उगल दिया, "अरी मुई, इस बार खेत में धान की बाली देखती नहीं ? आधा धान भी दो साल से ज्यादा चलेगा।"

रात में बूढ़ी को नींद नहीं आई।

नामघरैया ने रात में सोते समय भगवान से आपत्ति की। "जिसे चाहिए नहीं उसे देते हो, भगवान ! बूढ़ी वह सब लेकर क्या करेगी ? तुम भी...।"

वही मेसू की मां बीमार है। नामघरैया की बुलाहट हुई। खबर दी बाखर ने। हाट में बेचने के लिए सामान लाने गया था। पिछली बार कई गुच्छे सुपारी तोड़ने की बात कही हुई थी। बूढ़ी गड्ढा खोदकर सुपारी पकाने की बात नहीं सोचती, उसमें बहुत जंजाल है। सुपारी पके, तोड़ो और बाड़ी में ही जो दाम मिले, लेकर बेच डालो। यही आसान है।

क्या हुआ है ?

बुखार। तीन दिन हो गए। मुंह में दाना तक नहीं गया। बिस्तर पर ही कराहती पड़ी हुई है।

नामघरैया दोपहर को आ गया। आवाज दी, "मेसू की मां, क्या हुआ ?"

"बुलावा आ गया है, नामघरैया... !" आवाज और नहीं निकली। बहुत कमजोर है।

"अरी नहीं, तुझे ले गया तो यमराज रखेगा कहां ? लेने आएगा भी, तो लौट जाएगा। कहेगा कि बूढ़ी अपनी बाड़ी की रखवालिन बनी रह।"

मुंह से ही वैसी बात कही, पर अंदर से बहुत दुखी हुआ नामघरैया। बूढ़ी के माथे पर हाथ रखकर देखा। बुखार है ही। पूछा," पानी एक घूंट पीएगी न ?"

तीन दिनों से यही बात सुनने के लिए मानो बूढ़ी बड़ी आकुलता से इंतजार कर रही थी। दोनों आंखों से आंसू लुढ़क पड़े। कंधे पर के गमछे के छोर से नामघरैया ने कोमलता से दोनों आंखें पोछ डालीं और कहा, "कुछ नहीं हुआ है, जल्दी भली हो जाएगी। ठहर, मैं दवा की खबर करवाता हूं।"

नामघरैया बूढ़ी के घर से निकला तो बाखर मिल गया। "तू खबर लेते रहना। मां से भी कहना कि संभव हो तो एक बार आएगी।" बाखर ने हामी भरी।

नामघरैया ने गुण को पकड़ा, "पटिया गांव से ही कोई दो खुराक दवा ला दे।"

गुण ने तपाक से पूछा, "बूढ़ी ने पैसा दिया है ?"

"बूढ़ी तो होश में ही नहीं है जी। पैसे की बात कहूं तो कैसे ? होगा, ले तो आओ।"

"तुम भी मुझे ही परेशान करने पर तुले हो न ?"

"तू कोई बाहर का लड़का है रे ? जा तो, गांव की एक औरत पड़ी है।"

गुण ने कुछ नहीं कहा। नामघरैया का स्वभाव गांव के सभी लोग जानते हैं। मुसीबत में नामघरैया के लिए पुरोहित और घोर कृपण मेसू की मां में कोई अंतर नहीं।

बूढ़ी के घर से सटा घर बापकण का है। वहां थोड़ा दूध मांगने गया। वहीं दूध गरम करवाकर पुरोहित के घर से एक मुट्ठी खील मांग लाया। दोनों लिए बूढ़ी के पास आया। बाखर की मां बूढ़ी की बगल में बैठी थी। नामघरैया के आने पर उसने उठकर आंचल संभाल लिया।

गरम दूध में थोड़ी खील मिलाई नामघरैया ने। और फिर बूढ़ी को हुक्म दिया "मुंह खोलो, मेसू की मां ! यदि मरना है तो मेरे हाथ से ही कुछ खाकर मर।"

बूढ़ी ने खील खा डाली। थोड़ी जान में जान आई। यह व्यवस्था की गई कि बाखर, बाखर की मां और सनातन इनमें से बारी-बारी कोई बूढ़ी के पास रहेगा। सनातन की जरा-सी भी इच्छा न थी। नामघरैया की बात टाल न सकने के कारण ही सहमत हुआ था। बाखरों की भी वही बात थी। गुण ने दूर-दूर से ही खबर ली। नव, हेमकांत और यहां तक कि पुरोहित जी ने भी खबर ली।

पर बूढ़ी के अच्छे होने का लक्षण किसी ने भी न देखा। होश है ही। नामघरैया बात अच्छी तरह समझ गया। उस दिन दोपहर के समय थोड़ा चिउड़ा मलकर जरा-जरा खिला रहा था। जब बूढ़ी ने खाना न चाहा, तब नामघरैया ने धमकाकर कहा, "खा, री बुढ़िया ! नहीं तो दांत निपोड़े पड़ी रहेगी, कोई देखने न आएगा...।"

"मेरी देखभाल करने की तुमलोगों को जरूरत नहीं है रे ! मुझे जाने दो।" बहुत समय लेकर एक दो अक्षर करके कहा था बूढ़ी ने। उसके बाद नामघरैया से पूछा कि कोई बगल में है तो नहीं। 'नहीं' कहने पर बूढ़ी ने विनती करके नामघरैया को कहा, "सुन नामघरैया ! तुझे ही एक भार दे जाऊं।"

बूढ़ी की बात खत्म होने में बहुत देर लगी। बात सुनकर नामघरैया पसीने-पसीने होने लगा जैसा कि बुखार में होता है। बूढ़ी को खाना खिला रहे हाथ कांपने लगे। मन-ही-मन वेदी के भगवान को प्रणाम किया और बूढ़ी से कहा, "मौसी, मैं अपनी कसम खाकर कहता हूं, तेरी बात रखूंगा।"

बात खत्म होते-न-होते बाहर से किसी ने बड़े आदर-पूर्वक आवाज लगाई, "फूआ, फूआ है घर में ?"

"इधर से ही अंदर आ जाइए, कौन आए हैं ?" एक कुलीन आदमी अंदर आया। पहनावे-ओढ़ावे से साफ-सुथरा। बूढ़ी को देखते ही ठिठक कर रह गया। बहुत चिंतित होकर पूछा, "मालती फूआ, तुझे क्या हुआ ?"

नामघरैया को अभी ही पता चला कि बूढ़ी का नाम मालती है। पर इससे क्या ? फूआ कहने वाले को पहचान पाने का कोई लक्षण ही न था बूढ़ी के चेहरे पर।

नामघरैया के मन में अभी-अभी जो भाव आया था, उसे झटककर वह पहले का नामघरैया बन गया और धमकाकर कहा, "ऐ बहरी बूढ़ी, देखती नहीं, एक मेहमान आए हैं ?"

अतिथि अचरज में पड़ गया। यह कौन आदमी है ? एक बीमार औरत से इस तरह बात करता है। उसने कह ही दिया, "भला इस तरह से कहते हैं बात ? कौन हो तुम ?"

"मैं तो मैं ही हूं। आपको कभी देखा हो, ऐसा याद ही नहीं आता।"

"मैं बनगांव से आया हूं। ये मेरी फूआ हैं।" कहा और बूढ़ी की ओर झुककर कोमलता से कहा, "ओ फूआ, मैं हूं मोना।"

नामघरैया बूढ़ी को तभी से देखता आ रहा है, जब से वह चिउड़ा कूटने लायक हो गई थी। मोना या पोना जैसा कोई अपना आदमी है, सो तो कभी सुना नहीं। भला ही हुआ। बूढ़ी के मुंह में एक बूंद पानी देने वाला तो कोई निकला।

"मैंने सुना था कि फूआ की तबीयत ठीक नहीं। लेकिन तबीयत इतनी खराब है, यह मालूम नहीं था। अच्छा हुआ, मैं आ गया। यदि तुम कर सको, तो थोड़ा पानी गरम कर दो।"

"मैंने बूढ़ी की... मैंने आपकी फूआ की देगची देखी ही नहीं। फिर इस समय नहाना-धोना...।"

"ओह, तुम इतने भगत हो ?" कहकर मोना खुद ही रसोईघर की तलाश में अंदर चला गया। दहलीज पर ही मेसू बैठी थी चिंता की मुद्रा में। वह 'म्याऊं' बोलकर हट गई।

नामघरैया ने मेसू को भुलाया नहीं। समय होने पर उसे भी कुछ खाने के लिए देता। बिल्ली ही नहीं खाती। इस कारण भी नामघरैया ने अनुमान कर लिया कि बूढ़ी के दिन गिने हुए हैं।

अंदर से लौटकर भतीजे ने कहा, "फूआ की देखभाल मैं ही करूंगा। तुम घर जा सकते हो।"

"बहुत अच्छा होगा, समझते हैं न ! हम भी बतियाया करते थे कि इस समय मुंह में एक बूंद पानी देने वाला एक अपना आदमी हो तो भला।"

मोना ने नामघरैया की बात का उत्तर देना आवश्यक नहीं समझा। लेकिन अगले दिन सुबह ही भतीजे का भंडाफोड़ हो गया। वह भी एक करुण परिस्थिति में।

नामघरैया को तो रात में ही संदेह हो गया था। इसीलिए ब्रह्ममुहूर्त में ही समाचार मालूम करने वह बूढ़ी के घर पहुंचा। दृश्य देखकर नामघरैया अचंभे में पड़ गया। बूढ़ी का एकदम करीबी भतीजा अपना नाक-मुंह कपड़ा से ढंके प्रायः बेहोश बूढ़ी को बांह पकड़कर झकझोर रहा था और पूछ रहा था। "बता, बताती क्यों नहीं, कहां है ?"

घर में बदबू थी। नामघरैया आगे बढ़ गया। आवाज दी, "हाय-हाय, भतीजा बाबू ! क्या करते हैं ? और यह बदबू किस चीज की है ?"

मोना पलभर के लिए ठिठक गया और फिर गरजकर बोला, "बूढ़ी ने सारे कपड़े-लत्ते खराब कर दिए हैं और अब गूंगी बनने का स्वांग रच रही है।"

"हे हरि ! आप तो भतीजा हैं, आपको तो संभालना चाहिए था। मैं देखूं, आप वहां से हटिए। मैं देखूं, क्या कर सकता हूं ...।"

नामघरैया की बात पूरी होते-न-होते बाखर की मां भी आ पहुंची। उसने परिस्थिति का झट अनुमान कर लिया।

"तुम्हें घिन तो नहीं लगेगी, बाखर की मां ? कपड़े बदलकर बाहर कर दो, मैं धोकर ले आऊं।"

"नहीं लगेगी। थोड़ा ठहरिए।" बाखर की मां ने आंचल संभालते हुए धीमे से कहा।

नाक-मुंह पर कपड़ा डाले ही मोना घर से बाहर आ गया। बाखर की मां ने एक बर्तन में पानी लिया और जितना बन सका कोमलता से बूढ़ी के कपड़े बदले और गंदे कपड़ों की पोटली एक किनारे रख दी और फिर पानी से चेहरा पोंछ डाला।

नामघरैया ने दरवाजे की बगल से आवाज दी, "कपड़े दे दो मुझे। धो लाऊं। नहीं तो मुझे उधर देरी हो जाएगी।"

"थोड़ी देर बाद मैं ही... ।"

"जरूरत नहीं, निकालकर मुझे दे दो। आज बूढ़ी के पास से चली मत जाना। बाखर या रुद्र आए, तो किसी को बैठाकर ही जाना। मैं नहा-धोकर नामघर के काम खत्म करके ही आ सकूंगा। बूढ़ी के कपड़े दे जाऊंगा, धूप में फैला देना।"

दोपहर जब नामघरैया आया, तो देखा कि घर एकदम खामोश है। रुद्र बूढ़ी के बिस्तर की बगल में ही बैठा ऊंघ रहा है। मोना आगे की ओर नींब की कुरसी पर चिंतित बैठा है। बूढ़ी नींद में है, बेहोशी में नहीं।

नामघरैया बाहर आया और मोना के पास ही जमीन पर बैठ गया। उसने पूछा, "भतीजा बाबू, खाने का क्या इंतजाम किया ?"

"बाखर की मां ने कहा है कि वह कुछ उपाय करेगी।"

"अच्छा ही होगा। भतीजा बाबू ! आप क्या सुबह-सुबह झकझोरकर बूढ़ी के रुपए-पैसे की बात पूछ रहे थे ?"

मोना चुप रहा।

"बूढ़ी का तो कोई नहीं है न, बाबू ? इसीलिए सब कुछ वंशीगोपाल ने अपने हाथ में कर लिया है।"

"कौन है वंशीगोपाल ?" इस बार मोना की आवाज तेज हुई।

"है एक आदमी। उसने बूढ़ी की जमीन-जायदाद, रुपया-पैसा सब कुछ हथिया लिया है।"

"वह कैसे हथिया सकता है ? कौन है वह ?"

"मत कहिए, भतीजा जी ! उस आदमी का बड़ा प्रताप है।"

"क्या यहां आएगा ?"

"ओह ! वह तो हिलता-डुलता भी नहीं। लुंज है। दोनों पांव पत्थर के हैं।"

"क्या मैं उससे मिल नहीं सकता ?"

"मिल सकते हैं, मिल सकते हैं। आप जाना चाहें, तो बाखर को बुलाकर साथ ले जाइएगा। वैसे उससे कुछ आशा न करना ही ठीक है। समझते हैं ... ?"

"ठीक है। समय पर देखा जाएगा।"

"सही कहा आपने, भतीजा बाबू ! समय पर अपने-आप सारी बात खुल जाएगी। अच्छा, अब आप बैठिए, मैं चलता हूं।"

"बाखर अभी इधर आएगा ?"

"आएगा, आएगा। मैं भेज दूंगा।"

"वह वंशीगोपाल को पहचानता तो है ?"

"पहचानता है। क्यों नहीं पहचानेगा ? उसे ले जाइएगा। आप उसे मत छोड़िएगा। उसने हमें भी कम परेशान नहीं किया। आपने देखा ही कि मुझे सुबह-ही-सुबह किस तरह गंदा काम करना पड़ा। उसका हुक्म था। 'नहीं करेंगे' कहने की किसकी हिम्मत है भला ! आप ही उसे वश में कर सकते हैं।"

भतीजे को थोड़ी आशंका हुई। आदमी की बातें कुछ टेढ़ी-मेढ़ी हैं। अच्छा, बाखर तो आए।

बाखर आया। मोना ने बात कही तो उसका मन हुआ, ठठाकर हंसे। पर हंसा नहीं और उसने कहा, "वंशीगोपाल के पास जाने में मुझे डर लगता है। यदि जाएं तो नामघरैया को साथ ले जाइए।"

उधर वैसी बातें कहकर नामघरैया को शांति नहीं मिली। वहां से निकला और सीधे पुरोहित जी के पास गया। उसके बाद नव, गुण, हेमकांत, रुद्र इत्यादि जो मिला, सबको शाम के समय जैसे-तैसे नामघर में इकट्ठा होने के लिए कह आया, "बहुत जरूरी काम है। कोई अनुपस्थित न रहे।"

सभी आए। और तो और, पुरोहित जी भी आए। पिछले तीन दिनों में नामघरैया ने उनसे भी कुछ कहा न था। कोई भी नहीं समझ पाया कि इतनी बड़ी और जरूरी बात क्या है। डिंब ने मुस्कुराकर पूछा था,"अरे नामघरैया, तूने किस बात का सम्मन जारी किया है ?"

"बात तो बड़ी ही है, भैया ! मेसू की मां और ज्यादा दिन बचनेवाली नहीं, तिस पर एक यमदूत धमका है उल्लू, बोलने भी लगा है। इसीलिए सोचा कि समाज को जिम्मेवारी सुपुर्द कर दूं... ।"

आजकल सब जान गए हैं कि मेसू की मां कौन है। बूढ़ी मरणासन्न है, यह भी सब जानते हैं। फिर भी, नामघरैया की पहेली कोई समझ न पाया।

"बूढ़ी मरे तो भला ही हो। अकेली औरत, मुक्ति पा जाएगी।" बलीन ने कहा।

"सो तो है, पर बूढ़ी तो लोगों को समेटकर ही मरना चाहती है... ।"

"तू छोड़ अपना पागलपन," पुरोहित ने डपटकर कहा, "तूने लोगों को क्यों इकट्ठा किया है, वही कह।"

"बूढ़ी ने दो दिन पहले आपलोगों से कहने के लिए दो बातें कही हैं... ।"

"क्या-क्या ?" वस्तुतः बूढ़ी की बीमारी या संभावित मौत के अलावा किसी और बात में किसी की कोई दिलचस्पी नहीं। बज्र कृपण बूढ़ी मरेगी तो उसकी बाड़ी में भूत नाचेंगे।

"बूढ़ी ने बाड़ी समाज को दे दी है। यदि संभव हो तो यह स्कूल वहीं पर ले जाया जाए। बूढ़ी मरने के बाद भी महसूस करेगी कि छोटे-छोटे नौनिहाल उसके सीने पर खेल रहे हैं। नहीं तो, नव ने जैसा कहा था, वहां पर दवाखाना ही बना डालना चाहिए।"

जमा हुए सभी लोग चकित रह गए। प्रत्येक के मन में बूढ़ी की अलग-अलग तस्वीरें कौंधीं। एक पनियाला उठा लेने पर भी जो बूढ़ी छड़ी लेकर लड़के-लड़कियों को खदेड़ती है, उसी बूढ़ी ने यह सब क्या कहलाया है !

"इस बीच बातचीत हुई थी और खोज-खबर भी ली गई थी। गांव में ही ऊंची जमीन दो बीघा मिले तो जिले के अधिकारी वहां 'शिशु कल्याण केंद्र' खोलने की व्यवस्था कर सकते हैं। जमीन मिली नहीं है। क्योंकि कोई दाता आगे नहीं आया। जमीन मिलते ही जिले में खबर देने की बात है। नव वगैरह जमीन की खबर कर रहा है।"

"और... ।" नामघरैया ने बात खत्म नहीं की। "दवाखाना हो या स्कूल। बूढ़ी ने मकान बनाने के लिए लगभग एक हजार रुपया गाड़कर रख छोड़ा है। उसको भी लगा देना

है। कहां गड़ा है, मुझे बता चुकी है।"

लोगों का विस्मय और बढ़ गया।

"इसके अलावा धान खेती की आठ बीघा जमीन उचित दाम पर बेचकर थोड़ा पैसा बूढ़ी के श्राद्ध में खर्चकर बाकी उसी काम में लगा देना है। बूढ़ी ने जोर देकर यह भी कहा है कि जमीन कोई भी खरीदे, पर आगे के कई वर्षों तक आधी पर खेती करने सनातन को ही दे।"

किसी के मुंह से आवाज नहीं निकली। पुरोहित ने एक बार कंधे के गमछे के छोर से दोनों आंखें पोंछीं। गांव में शिशु कल्याण केंद्र खोलने की बात जब पहली बार निकली थी, तब नव ने समझाया था कि केंद्र में क्या होता है। शिशुओं को कई तरह की निरोधक सूइयां दी जाती हैं। पोलियो की निरोधक सूई बचपन में ही लेने की सहज सुविधा है और वह समय पर दी जाए तो बच्चे-बच्चियों को पोलियो की बीमारी नहीं होती। यह बात निकलने पर भी पुरोहित ने गमछे से आंखें पोछी थीं। आज भी उन्होंने आंखें पोछीं।

लोग तत्काल कोई निश्चय नहीं कर पाए। नगदी रुपया कहां है, वह बात भी किसी ने नामघरैया से नहीं पूछी। सबने एक साथ ही बूढ़ी के पास जाने का निश्चय जरूर किया। "मैं भी चलूं, चलिए," कहकर पुरोहित भी चल पड़े।

बूढ़ी केवल इतना ही समझ सकी कि एक साथ कई लोग आए हैं। किसी को पहचान न सकी। नामघरैया ने अपनी धमकी भरी आवाज में कहा, "ऐ बूढ़ी, तेरी खबर लेने सारा गांव उमड़ पड़ा है। देख, पुरोहित देवता भी आए हैं। यदि जाना है, तो जा इस शुभ घड़ी में।"

पुरोहित ने एक ऐसा काम कर डाला जो वे करते नहीं। बूढ़ी के माथे पर एक हाथ रखकर कोई श्लोक बुदबुदाया। बूढ़ी को लगा कि सारा बदन शांत-स्थिर हो गया है। दोनों आंखों से आंसू अविरल लुढ़कने लगे।

नामघरैया ने भी अपनी दोनों आंखें पोछीं। बाकी लोग एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे और सबने एक साथ आंखें फाड़े चुपचाप एक तरफ खड़े अतिथि भतीजे मोना की ओर देखा। नामघरैया का यमदूत यही आदमी है, सब समझ गए।

सभी यह भी समझ गए कि रात बीतेगी, इसका ठिकाना नहीं। बाहर आकर यह निश्चय किया गया कि रुद्र और गुण रात में पहरा देंगे। नामघरैया ने कहा, "मैं भी रहूंगा।"

नामघरैया को कोई गिनती का आदमी नहीं समझता। फिर भी उसके बिना गांव का कोई भी काम संपन्न किया नहीं जा सकता।

"नहीं तो तू जल्दी जा। नहा-धोकर थोड़ा भात बना ले और खाकर आ जा।" हेमकांत ने नामघरैया से कहा। हेमकांत जानता है कि उस तरह जोर न दिया जाए, तो नामघरैया भूखा ही रह जाएगा।

लेकिन खाना खाने से भी बड़ा काम बाकी था उसका।

नहाकर आया और एक दीया जला मणिकूट में बैठा रहा नामघरैया। पत्थर के देवता की ओर देख तल्लीनता से "अपराध विनाशन तयुनामे नारायण" घोषा गाया और फिर दिन भर का प्रतिवेदन रखा।

हे भगवान, बूढ़ी को गोद में उठा लो। देखो तो, सारा जीवन कंजूसी करके मरी बूढ़ी ने कितना बड़ा काम कर डाला !

हेमकांत बूढ़ी की जमीन शायद खरीद लेगा, वह खरीद सकेगा ? सनातन ने अधिया देने की बात में धोखाधड़ी की है, उसका बुरा मत मानना। उसे तो जानते ही हो, आधा धान देने जब-जब आता, बूढ़ी से घोर युद्ध किया करता। क्या करेगा ? इतने पर भी भरपेट खा नहीं पाता।

आह ! पोलियो से बचने की दवा मिलने की बात जानकर पुरोहित जी को अपनी बिटिया का बदन याद आता। इस्स, कितनी प्यारी बच्ची थी वह ! उसके भी दोनों पांव सीधे हो गए होते, यदि किसी ने पुरोहित जी को यह खबर उस समय दी होती, जब वह छोटी थी।

"तुम बड़े निष्ठुर हो, भगवान ! ले लो। बूढ़ी को अपने हृदय में ले लो।" यह कहकर नामघरैया घुटनों पर बैठ गया और गाने लगा, "तारियो तारियो नाथ... !"

6

नामघरैया का रिजर्व बैंक है एक छोटा-सा गुल्लक। उसकी गर्दन पतली है, हाथ नहीं घुसता। कभी कोई नामघर में दे गया था। एक रस्सी में ससरफांसी लगाकर रसोई के छप्पर से लटका दिया गया है। उसी में रुपया, अठन्नी जब पाता, डाल देता। कभी जरूरत होती, तो उलटकर रखते ही कई सिक्के गिर पड़ते और उन्हीं से जरूरत के सामान ले आता। बहुत सारे नोट हैं। तहकर छोटे-छोटे बनाए हुए। नामघरैया को याद ही नहीं कि उसने गुल्लक में पैसे रखना कब से शुरू किया है।

उपार्जन का कोई उपाय ही नहीं है नामघरैया को। कीर्तन करने पर लोग नामघरैया के लिए भी अलग से कुछ पैसा रख देते हैं। उसके अलावा भी, युवक लोग ऐसे भी कभी-कभी दो-एक रुपया दे जाते। भावना-सम्मेलन करने पर भी नामघरैया को कुछ पैसे मिल जाते।

खर्च कोई है नहीं। नामघर के लिए प्रयोजनीय दाल-चावल के अलावा, नामघरैया के

लिए जरूरी चावल खरीदने का भार भी लोगों ने उसे दे रखा है। आदमी का स्वभाव देखकर किसी ने आज तक कुछ कहने की जरूरत ही नहीं समझी। नामघरैया अपने लिए कभी कुछ मांगता ही नहीं। बिहु में कभी इस घर से तो कभी उस घर से नामघरैया को गमछा या धोती मिल जाया करते। कुरता तो पहनता ही नहीं। एक बार किसी ने गंजी पहनने के लिए दी थी। कहते हैं कि वह पहनते ही नामघरैया की देह खुजलाने लगी।

एक ही खर्च है जो बार-बार करना पड़ता। यह स्कूल सटा होने के कारण उसके सारे जंजाल नामघरैया के होते।कभी-कभी कोई छोटा लड़का हिचक-हिचक कर रोने लगता। देख-सुनकर बहुत दुख होता नामघरैया को। पेंसिल नहीं है, मास्टर ने पिटाई कर दी। छीना-झपटी करते पाटी गिर पड़ी और कोना टूट गया। कभी-कभी बड़ा अनर्थ घट जाता। गिनती-पहाड़े की किताब पूरी-की-पूरी फट-चिट जाती। कोई मुफ्त में छोड़ने वाला नहीं। नामघरैया आगे बढ़ता और सबका जिम्मा ले लेता।

"बच्चे का मन है, वे यह सब भला जानबूझ कर करते ? एक किताब खरीद देना। दो रुपये रख ले अपने पास।" नामघरैया शहर जा रहे किसी से विनती करता।

अगले दिन लड़के या लड़की के मुंह की हंसी नामघरैया को ठीक वैसी ही लगती, जैसी वेदी के भगवान के मुंह की।

आज की जरूरत एकदम अलग है। रस्सी खोलकर गुल्लक उतार लिया। नामघर के फर्श पर एक आसनी बिछा ली और सारा खजाना निकालने के इरादे से गुल्लक उल्टा दिया। ढेर सारे सिक्के और तह कर रखे एकटकिया और दोटकिया नोट गिर पड़े। दो-एक पांचटकिया, दसटकिया नोट भी निकले।

एक ओर से खजाना गिनने लगा। गिनती खत्म होने पर नामघरैया का मन हुआ कि रो दे। एक सौ के लगभग था खजाना। बानवे रुपए चालीस पैसे। पर इतने से क्या ? सब दे डालने पर भी जयद्रथ को पूरा नहीं पड़ेगा। काने बैल के साथ हल में जोतने के लिए चार या छह दांतों वाला बैल किसी भी तरह खरीदा नहीं जा सकता।

सारे पैसे बटोरकर गुल्लक में रखे और उसे फिर से लटका दिया।

"यह सब तुम्हारी कैसी लीला है, भगवान ? चमार को देखा न ? देखते-देखते किस तरह खाल उधेड़ कर ले गया। उसे ढेर सारे रुपयों का लोभ होगा। और गिद्धों को ? साथ के कई चालाक कौवों और दूर के कई कुत्तों को ? उनका तो एक महाभोज ही हुआ। पूरा-का-पूरा बैल एक ही बार में चट कर गए।

"और जयद्रथ की हालत ? बेचारा छाती पीटकर रो रहा है। उसी के माथे पर विपदा क्यों लाद दी ? उसे तो पहले से ही बाढ़ ने परेशान कर रखा था। सारा-का-सारा लहलहाता धान बाढ़ ने चौपट कर दिया। हां, केवल उसी की खेती बर्बाद नहीं हुई।सभी लोगों की दशा सोचनीय थी। फिर भी, जयद्रथ ने नए सिरे से आहुधान[1] रोपने का निश्चय किया ही

1. शरद ऋतु में रोपा जाने वाला और जल्दी होने वाला धान।

था कि तुमने उसके एकमात्र हल का रास्ता भी बंद कर दिया... ।"

एक प्रलयंकारी बाढ़ आ गई थी। कहते हैं कि परदादा-परदादियों को भी वैसी भयंकर बाढ़ की याद नहीं आती। लोगों की फसल तैयार हो गई थी। खेत में धान खड़े ही थे, सबको बाढ़ निगल गई। खेती की तो बात ही क्या ! कितनों के बखार डूब गए। घर के सारे सामान बर्बाद हो गए। भला कौन सोच सकता था कि ऐसी भीषण बाढ़ आएगी, जैसी कभी आई न हो ?

और यह नामघर ! भगवान पांच दिनों तक कमर भर पानी में डूबे रहे। दूसरे लोगों के साथ नामघरैया ने भी तटबंध पर शरण ली थी। जिस दिन तक पुरोहित जी ने नामघर, मणिकूट धो-पोंछकर नित्य पूजा नहीं की, उस दिन तक नामघरैया ने एक चुल्लू पानी तक नहीं लिया।

नामघरैया का अटल निश्चय, "कुछ भी नहीं खाऊंगा । उसने ध्यान क्यों नहीं दिया ? बाढ़ ने इतने लोगों के मुंह से भात का निवाला छीन लिया ! कितने लोगों को भिखारी बना दिया !"

वह बाढ़ खत्म हुई । घर-घर में नया बसेरा लेने का प्रयास शुरू हुआ । किसी ने सरकारी सहायता का एक भाग नामघरैया को भी दिया। राहत की सामग्री देने के लिए आए जिले के अधिकारी को गांव के लड़कों ने जमकर पीटा था । इसलिए नामघरैया सहायता लेना ही नहीं चाहता था। कहते हैं कि उस अधिकारी ने इस गांव के लिए भेजी सामग्रियों में से कई बोरे चोरी से शहर में बेच दिए थे। नव वगैरह समझदार लड़के हैं । उनलोगों को पता चला तो बात कह दी। फिर क्या बात थी ? इस आफत के समय उस आदमी ने वह सब कैसे किया, यह सोचकर नामघरैया भी अचरज में पड़ गया। इसीलिए उसने कहा कि उसको दिया जाने वाला हिस्सा किसी ज्यादा जरूरतमंद को दे दें।

अधिकारी की उस तरह पिटाई होने से गांव का एक दूसरा उपकार ही हुआ । उससे भी बड़ा एक अधिकारी बात की जांच करने गांव आया। लड़कों की खुशामद की कि ज्यादा लिखा-पढ़ी न करें, मामले को आगे न बढ़ाएं । गांव को और जो सहायता चाहिए, मिल जाएगी ।

लड़कों ने पहले तो कुछ नहीं कहा। बाद में कहा कि आहुधान के पौधे और जल्दी से जमीन जोतने के लिए एक या दो ट्रैक्टर दें। वे लोग 'नहीं' कह न सके।

ये सारी बातें किसी ने नामघरैया से कही न थीं। पर गांव के युवक बातचीत किए बिना भला कैसे रह सकते थे ? और बातचीत का अड्डा तो नामघरैया के कब्जे में है। वे सारी बातें आज एक साथ ही नामघरैया को याद आ रही हैं। कलेजा फाड़ डालने वाली जयद्रथ की रुलाई सुनकर। एक ट्रैक्टर दिया जा चुका है। पौधे भी देंगे। ट्रैक्टर नामघर में ही रहेगा। ड्राइवर स्कूल के एक कमरे में रहेगा। खुद बनाएगा, खाएगा। धान के पौधे भी स्कूल के एक कमरे में रखे जाएंगे और बापा भैया हिसाब से बांटेंगे। ट्रैक्टर का हिसाब गुण रखेगा।

ट्रैक्टर का हिसाब क्या ?

वाह ! हिसाब के बिना काम कैसे चलेगा ? सरकार जो सुविधा दे सकती थी दे चुकी। ट्रैक्टर चलाने के लिए डीजल और मोबिल की जरूरत होगी। उसका खर्चा अपना-अपना होगा। उनलोगों ने हिसाब करके दे दिया है कि एक बीघा में तेल का खर्च कितना पड़ेगा। उसी हिसाब से गुण जमीन के अनुपात में तेल का दाम लिया करेगा और ड्राइवर को जमीन दिखला दिया करेगा।

क्यों ? क्या सरकार तेल नहीं दे सकती ?

"दे क्यों नहीं सकती ? जमीन की जुताई के बाद सरकार पौधे रोप देगी। धान पक जाने पर कटाई कर देगी। दौनी करके धान अलग कर देगी। और मिल में कुटाई करवाकर चावल तुम्हारे घर रख आएगी। सुबह-शाम धोकर भात बना देगी। तब तक तुम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहोगे और जब भात तैयार कर देगी, तब तुम शानदार पोशाक में बैठकर खाओगे। कुछ और करने की क्या जरूरत ? हेमकांत ने मुंह उठाकर बातें कही थीं। हर बात में सरकार-सरकार करना उसे अच्छा नहीं लगता।

बाकी लोग खामोश हो गए। नामघरैया को तो बोलने का अधिकार ही नहीं। होता तो लोगों को कुछ राहत मिलती।

ट्रैक्टर आया। पीछे-पीछे गांव के लड़के-लड़कियों की लंबी कतार। ड्राइवर नामघरैया की उम्र का ही होगा। आंखों पर काला चश्मा। गुण बगल में बैठा हुआ। वह नव इत्यादि के परामर्श के अनुसार सुबह ही शहर गया था।

ड्राइवर को रहने की जगह बता कर गुण चला गया। अगले दिन सुबह से ही काम शुरू होगा। शाम को कोई और बात है तो होगी।

"ट्रैक्टर तुम्हारे जिम्मे लगाया ! ओ नामघरैया,   इस ड्राइवर को भी देखना" जाने से पहले गुण कहता गया।

गांव के जिम्मे जितनी जमीन है उसे जोतने में कम-से-कम पंद्रह दिन लगेंगे। जमीन जोतता जाएगा और पौधा रोपेगा। आहु की खेती नहीं करने वाले दो-एक लोग भी सुविधा मिलने के कारण आगे आए। इधर बाढ़ का प्रभाव भी खत्म हो चुका था।

शाम के समय भगनीया और बाकरिचुक गांवों से भी लोग नव, गुण, हेमकांत इत्यादि की खुशामद करने आए। ट्रैक्टर और मुफ्त पौधे की सुविधा उनलोगों के गांवों को भी मिलनी चाहिए।

"आपलोग जाइए। वहां पूछताछ कीजिए। यदि संभव हुआ, तो हो जाएगा। हमारा देने, न देने का क्या अधिकार है ? हां, एक बात है, हमारा काम खत्म होने पर ही ट्रैक्टर जा सकता है।"

उसी के अनुसार तय हुआ कि जल्द एक दिन दो प्रतिनिधि जाएं। नव ने बातचीत करने का दायित्व लिया।

नामघरैया ने ड्राइवर से पूछा कि यदि उसे बुरा न लगे तो रात का खाना उसी के साथ खाए ? कल दिन के उजाले में अपनी पसंद से बनाए। ड्राइवर खुश ही हुआ। नामघरैया लपक कर गया और बुद्धू की दुकान से एक रुपए की मसूर की दाल खरीद लाया।

सुबह नामघर के प्रांगण में एकदम रास मेले का-सा दृश्य था। पुरोहित जल्दी आ गए। वे मणिकूट से निकले ही थे कि नामघरैया दौड़कर थोड़ा-सा घिसा चंदन ले आया और ट्रैक्टर के बोनेट पर एक तिलक कर मन-ही-मन भगवान का स्मरण किया और सोचा कि बिना किसी विघ्न के पखवाड़ा भर चले।

"अरे नामघरैया, किस लिए तिलक लगाया ?" किसी ने पूछा।

"मंतर लिख दिया बाबू, जिससे किसी की नजर न लगे।"

ट्रैक्टर चल पड़ा। सभी लोग कुछ दूर तक पीछे-पीछे चलते रहे। नामघरैया अधरों पर हंसी खिलाए अपनी जगह पर ही खड़ा रहा। उसने देखा कि रात जहां पर ट्रैक्टर था, वहां घास पर एक काला दाग है। उसने झुककर देखा। काला-काला तेल पड़ा हुआ है। तो क्या ट्रैक्टर फूटा पड़ा है ? उसका मन पलभर के लिए बुझ गया।

इसी समय उसने देखा कि रास्ते के किनारे के पाकड़ के पेड़ से टिककर चिंता की मुद्रा में जयद्रथ खड़ा है।

"अरे ओ जयद्रथ, इस तरह मन मारकर क्यों खड़े हो ? आज तुमलोगों के साथ नहीं थे ?"

"कैसे साथ होता, नामघरैया ? मुझे चालीस रुपए की जरूरत है।"

"मैं तो सोच रहा था कि जब बैल मर ही गया, तब सबसे पहले तू ही ट्रैक्टर के लिए जाएगा। पौधे लिए या नहीं ?"

"पौधे तो हैं, पर जमीन जोती न जाए तो दूसरों को दे देने के लिए कहा है उन्होंने।"

"अच्छा, होगा, रुको। इतना निराश मत हो।"

नामघरैया ने सोचा, गुल्लक झटपट खोलकर ले आए। वहीं से चालीस रुपए दे डाले। पर ठहर गया। केवल जयद्रथ को देने भर से भला सबका उद्धार होगा ? बुवाइ, सनातन, रमा वगैरह लोगों की अवस्था भी जयद्रथ की तरह ही है।

दोपहर के समय ड्राइवर ने ट्रैक्टर खेत में ही छोड़ दिया और अपने डेरे पर आया। नहा-धोकर खाने का इंतजाम किया। उसका घर गौरी सागर की ओर है।

यह समझना बड़ा आसान था कि खाने का इंतजाम करते उसे मुश्किल हो रही है। खाने में उसकी कोई विशेष रुचि नहीं। साग-सब्जी के साथ भी खा सकता है। काम करते हुए वह इस तरह बड़बड़ा रहा है कि नामघरैया सुने।

नामघरैया ने दोपहर का खाना बनाने का जिम्मा ले लिया। रात में ड्राइवर खुद बनाएगा-खाएगा और तब मछली-मांस भी खा सकेगा। नामघरैया तो वैष्णव है।

ड्राइवर को बहुत सुविधा हो गई। चावल और दूसरे सामान खरीदने निकला। नामघरैया ने 'अच्छा होगा' कहा और असल बात पर आया। ट्रैक्टर फूटा होने की बात।

"काला तेल चूने से थोड़ी जगह काली कैसे पड़ गई ?"

"ओ, वह कोई बात नहीं। तेल का एक सील चू रहा है। ज्यादा नहीं चूता।" ड्राइवर ने बड़ी सहजता से कहा।

"उस तेल से ट्रैक्टर नहीं चलता ?" नामघरैया ने सकुचाते हुए पूछा।

"नहीं-नहीं, वह तो इंजन के अंदर का तेल है। भीतर के पुर्जों की विडलन बनाए रखता है। आवाज नहीं होती...।"

"अच्छा...।" मानो नामघरैया सब कुछ समझ गया। उसी दिन शाम को ड्राइवर ने देखा, नामघरैया ने केले की छाल का एक दोना सिया और उसे चूते तेल के नीचे रख दिया ताकि बूंद-बूंद कर रिस रहा तेल उसी में इकट्ठा हो।

जिस दिन धान के बीज बंटनेवाले थे, उस दिन नामघरैया का रूप देखकर सब सकते में आ गए। नामघर की ही एक बड़ी टोकरी ली और उसकी बगल में एक गमछा फैलाकर रास्ते से सटकर घुटनों के बल बैठ गया।

"अरे, यह सब तेरा कैसा नाटक है, नामघरैया ?" अपनी पोटली लिए रास्ते से जा रहे देवाइ भगत ने पूछा।

"बाबू, भीख मांगता हूं। एक मुटठी इसमे फेंकते जाइए।"

"अजी, इसमें दवा मिलाई हुई है। भात नहीं बना सकते।"

"वह भी चलेगा, बाबू। हम भिखारियों का क्या।"

बात न बढ़ाने के विचार से हो या कौतुक में हो, भगत एक मुट्ठी बीज कटोरी में डालता गया। बाद के लोग कुछ पूछे बिना ही एक-एक मुट्ठी बीज डालते गए। किसी को अखरा नहीं। इसलिए नहीं कि मुफ्त में मिला हुआ था, बल्कि इसलिए कि एक मुट्ठी कम हो तो किसी को कोई क्षति नहीं।

लोगों ने देखा कि टोकरी भर जाने पर उसे अंदर रखकर एक दूसरी टोकरी डाल दी और नामघरैया अपने काम पर चला गया।

दोपहर में ड्राइवर को खाना परोसकर नामघरैया ने एक बार लजाते हुए पूछा, "आप एक बार मुझे भी गुण की तरह अपने ट्रैक्टर पर बैठने देंगे ?"

ड्राइवर को हंसी आ गई।

"बैठोगे-बैठोगे...।"

शाम को नामघरैया ने देखा कि दोने में रातभर में काफी तेल इकट्ठा हो गया है। उसे हाथ में लिए वह चला गया।

रास्ते में उसने देखा कि एक जगह जयद्रथ बैठा दुखी मन से खेत में चल रहा ट्रैक्टर देख रहा है। इधर सनातन अकेले कुदाल लिए सुबह जोती गई जमीन को समान कर रहा है।

और दो-एक ने रास्ते में नामघरैया के हाथ में दोना देखा। "अजी ओ नामघरैया, क्या मिला ?" कण ने पूछा।

"प्रसाद है, ट्रैक्टर का प्रसाद ?"

"ट्रैक्टर का प्रसाद ? अरे पगले, वह क्या चीज है ?"

"बड़ी विचित्र चीज है । जरा भी पड़ी कि आवाज हर लेती है ।"

"आवाज हर लेती है ? अरे, किसकी आवाज हरण करनी है ?"

"देखते रहना । यह प्रसाद पाते ही किसी की आवाज नहीं निकलेगी ।"

कण हंस पड़ा और चला गया । नामघरैया सीधा पुरोहित के घर पहुंचा । जाते हुए जयद्रथ से कह गया कि रात में एक बार नामघर आए ।

पुरोहित की ढेंकी बहुत आवाज करती थी । दोने से कई बूंद तेल धुरी की दोनों ओर डाल दिया नामघरैया ने । डाला और दो बार कूटकर देखा । बाकी तेल ढेंकीघर के एक कोने में दोना सहित रखा और चाची से कहकर कि उसने क्या किया है, चला गया ।

शाम को नामघरैया बहुत गंभीर था । इकट्ठा हुए युवकों में से किसी से उसने बात नहीं की । किसी ने पूछा, "तुम्हें क्या हुआ, नामघरैया ?"

"अरे देखो तो, इसका मुंह टोकरी की तरह हो गया है ।" किसी दूसरे ने व्यंग्य किया ।

"अरे तुझे हुआ क्या ? मुंह खोलकर कहते क्यों नहीं ?" इस बार हेमकांत ने पूछा ।

"मुझे एकबार ट्रैक्टर पर बैठने की इच्छा है ।" सब-के-सब खिलखिलाकर हंस पड़े ।

"तो बैठता क्यों नहीं ?"

"गुण किसी को बैठने नहीं देता... ।"

"अजी ऐसा किसने कहा ?" गुण ने लपक कर टोका ।

हंसी-मजाक के बीच ही तय किया गया कि अगले दिन दोपहर बाद नामघरैया भी जाएगा ।

ड्राइवर ने दिखाया कि किस तरह हाथ भर की दूरी पर लगे डंडे को धकेल कर या खींचकर पकड़े रहने पर मिट्टी जोतने वाले फलक गिराए या उठाए जा सकते हैं । दो-एक बार दिखाकर जमीन जोतता जा रहा था ।

"काम खत्म होने पर आप किधर से लौटेंगे ?"

"क्यों, जिधर से रोज आया-जाया करते हैं ?" ड्राइवर ने चकित होकर उत्तर दिया ।

"क्या इसे बना-बनाया रास्ता चाहिए ?"

"नहीं चाहिए । गहरा गड्ढा नहीं हो तो यह जिधर-तिधर जा सकता है ।"

"चलिए, लौट चलें ।"

पहले की ही तरह चकित होकर ड्राइवर ने ट्रैक्टर घुमाया । लगा कि बातों में कोई रहस्य है ।

"इस तरफ सीधा चलिए । देखें, जाता है या नहीं ।"

"क्यों नहीं जाएगा ? चलो... ।"

"हो गया-हो गया। यहीं पर फाल गिरा तो दीजिए।"

ड्राइवर ने इधर-उधर देखा तो पाया कि बगल की एक पगडंडी पर एक खूंटा धंसाया हुआ है। उसके ऊपरी सिरे पर फटे कपड़े का एक टुकड़ा बंधा हुआ है। ठीक से देखने पर कुछ दूर वैसी ही खूंटियां और दिखीं। ड्राइवर ने नामघरैया की ओर देखा।

"बहुत दरिद्र है, ड्राइवर बाबू! एक बैल था, वह भी बाढ़ के बाद मर गया। यह तेल का दाम भी चालीस रुपए न दे सका। आपसे विनती करता हूं, आते-जाते फलक गिरा डालिए...।"

"जमीन है किसकी ?"

"वह मेरा ही भाई है, जयद्रथ। आप कैसे पहचानिएगा ?"

ड्राइवर इन्हीं कई दिनों में बहुतों को पहचान गया है। अपने-अपने खेतों में खड़े होकर सबने ड्राइवर को निर्देश दिया है, "ड्राइवर, थोड़ा इधर ! यह कोना छूट गया...।"

जयद्रथ को नहीं पहचान पाया। रात में ही नामघरैया ने उसे सुझाव दिया था कि अपनी जमीन की सीमा पर वैसी कई खूंटियां गाड़ डाले।

अगले दिन मांगकर इकट्ठा किया बीज जयद्रथ, सनातन, बाबेन को बांटकर नामघरैया ने समझाया, "बीज घना नहीं डालने के लिए कहा है। ध्यान रखना।"

बात फैल गई। अब तक तंबू उखाड़ा जा चुका था और ड्राइवर ट्रैक्टर लेकर जा चुका था। बाकरिचुक गांव चला गया। नामघरैया ने एक दोना और तेल इकट्ठा किया और नव के घर से एक शीशी लाकर उसी में भरकर रख दिया।

ड्राइवर की बदनामी होने लगी। जरूर कुछ उल्टा-सीधा करके जयद्रथ की जमीन भी जोत डाली। गुण के लिए यह संभव न था कि वह कदम कदम पर जमीन दिखाता। अब नामघरैया को होश आया। शनिवार को कीर्तन में उसने बड़ी विनम्रता से विनती की। बदनामी तो उसी की होनी चाहिए थी।

किसलिए ?

क्योंकि उसी ने ड्राइवर को आने-जाने का अलग-अलग रास्ता दिखाया था और जमीन की पट्टी आते ही डंडा खींचकर फलक गिरा डालने के लिए अनुनय किया था। इसी तरह जयद्रथ की कई बीघा जमीन की जुताई हो गई। सनातन उसकी जिस जमीन पर अधिया करता, उसकी जुताई शुरू ही हुई थी।

"वैसा क्यों किया ? तू यदि हमसे कहता तो क्या हमने न दिया होता ?" हेमकांत ने पूछा।

"ऐसा नहीं है न ! मैंने सोचा, यदि उस तरह पैसा दिए बिना किसी की जमीन जोती जाती, तो पैसा दे सकने वाले लोगों ने भी हमें पकड़ा होता कि हमें भी मुफ्त में दो। इस रमणी ने ही उल्टा पकड़ा होता। तुमलोग किसको देते और किसको नहीं ?"

"और बीज ? मुफ्त का बीज तो तेरे हाथ में ही था। उसमें से न दे, उस तरह मांगने क्यों गया ?"

"बात तो एक ही है, भाइयो ! तब भी अधिकार की बात उठती। लोग कहते कि जो ट्रैक्टर का खर्चा नहीं दे सकते, उनको बीज क्यों दिया ? मैंने एक-एक मुट्ठी मांग ही लिया, ताकि किसी को न अखरे, ...।"

सबकी बोलती बंद हो गई।

"देखा न, भगवान !" रात में सोते समय नामघरैया ने भगवान को बताया। "कोई कुछ कह ही न सका। तुमको कोटि-कोटि प्रणाम प्रभु ! समय पर अक्ल दे देते हो।"

7

"यह तो एक साइकिल लेना चाहता है...।" आंचल से चेहरा ओट करके बाखर की मां ने नामघरैया से शिकायत की।

"वाह, भला ही है। वह अपने बूते पर साइकिल लेना चाहता है, फिर तुम्हें बुरा क्यों लग रहा है ?" नामघरैया ने एक हंसी बिखेरकर बात हल्की-फुल्की बना दी।

"बात वह नहीं है। आप मना करेंगे तो सुनेगा। वह माल शहर में बेचना चाहता है।"

"अच्छा, ऐसी बात है ! यह तो और भी अच्छी बात है। पर उसके दिमाग में यह कीड़ा किसने घुसाया ? वह शहर के बाजार का हिसाब-किताब कुछ जानता भी है ? सभी मिलकर उसका कारोबार दो दिनों में ही आधा कर डालेंगे।"

"यह बात आप कहें तो अच्छा होगा। हाट के पास ही साइकिल मरम्मत की दुकान करने वाला एक पुरानी साइकिल बेच रहा है। साइकिल देगा भी उधार, पर...।"

"लेकिन एक बात है, बाखर की मां ! उसकी इच्छा का तुम बुरा मत मानना। कोई नया काम झट से पकड़ना बहुत सुविधाजनक नहीं होता। फिर भी, उसने मुझे भी बात का पता न लगने दिया।"

"कहने की हिम्मत नहीं जुटा पाया। कहे-न कहे करता हुआ कल उसने मुझसे साइकिल खरीदने की बात कही, ताकि आप सुनें भी तो मेरे मुंह से ही।"

"रुद्र क्या कहता है ?"

"वे तो कुछ नहीं बोलते।"

"अच्छा होगा, जाओ। उससे एक बार कहना कि रात में बुलाया है।"

नामघरैया समझ नहीं पाया कि बाखर एक साइकिल खरीदना चाहता है तो इसमें क्या आपत्ति हो सकती है ? उल्टा नामघरैया को अच्छा ही लगा कि वह खर्च करने के लिए

उतने पैसे जमा कर पाया है ।

संभव है । नामघरैया के देखते-देखते कई नौजवान लड़के गांव में नई साइकिलें खरीद सके हैं । देखते-ही-देखते कई फूस के घरों पर टिन की छावनी हो गई । कई युवकों ने बेड़े से घेरकर अपनी-अपनी बाड़ी सुंदर कर ली है । इन आगे बढ़ते परिवारों को देखकर नामघरैया को बहुत अच्छा लगता । उससे भी ज्यादा अच्छा लगता है आगे बढ़ रहे युवकों की लगन और उद्यम देखकर ।

इन सबमें बाखर ने भी किस तरह एक-एक पैसा जोड़कर हिम्मत बढ़ा ली है, नामघरैया के लिए समझना कठिन नहीं । वह भी उत्साही हो गया है । ये सारे परिवर्तन भले ही हैं । गांव में ध्यान खींचने वाली ऐसी कोई भी बात होती, तो नामघरैया सिर झुकाकर अपने वंशीगोपाल के प्रति कृतज्ञता जताता । ऐसी हालत में यदि बाखर साइकिल खरीदना चाहता है तो मां को ऐसी आशंका क्यों हो रही है ? बाखर जी-तोड़ मेहनत करके अपने छोटे कारोबार को थोड़ा और बढ़ाना चाहता है, यह क्या वंशीगोपाल की ही कृपा नहीं है ?

"क्यों रे बाखर, क्या आजकल तुझे पैदल हाट जाने में थकावट लगने लगी है ?" शाम को बाखर आया । वह सीधा-सीधा कोई उत्तर न दे सका । बात गंभीर होती, तो वह प्रायः गूंगा हो जाता । नहीं तो, उसके मुंह से सहज भाव से शब्द फूटते ही रहते हैं ।

नामघरैया को कुछ संदेह हुआ । पूछा, "अजी, क्या बात है ?"

"सोमेश्वर साथ जाएगा । शहर में चीजों का दाम अच्छा मिलता है... ।"

"इतनी-सी बात कहने में तुझे इतनी परेशानी क्यों हो रही है ? असल में तुम्हारी सोच में कहीं कोई कमी है । बोल, वह क्या है ?" बाखर फिर चुप ।

"सुनो बाखर ! तुम्हारा कुछ भला देखकर, बल्कि तुम्हारा ही क्यों गांव का ही कुछ भला होता देखकर मुझे ही सबसे ज्यादा खुशी होती है या नहीं ? तू भी, अपना बाजार यथासंभव बढ़ा । मैं भी साथ दूंगा । इसलिए आग्रह करता हूं, मन छोटा मत करना ।"

"नहीं करता, भैया ! आप वैसा मत सोचिए । उस दिन सोमेश्वर अपनी साइकिल पर बैठाकर शहर ले गया । वहीं सिनेमा दिखलाया । दुकान में चाय भी पिलाई । इसलिए, दोनों साथ हों, तो हमेशा... ।"

इस बार नामघरैया गूंगा बन गया । बहुत देर तक एकटक बाखर का मुंह ताकता रह गया । शायद एकटक देखने के कारण ही, कुछ देर पर दोनों आंखों से आंसू की धारा बह चली ।

बाखर अचरज में पड़ गया । उसने ऐसा कौन-सा घोर अपराध किया है कि नामघरैया की पलकें टंगी-की-टंगी रह गईं ?

"भैया, क्या हुआ तुम्हें ?" उसने व्यग्रता से पूछा ।

नामघरैया ने कंधे के गमछे से झटपट आंखें पोछीं और कहा, "कुछ भी नहीं हुआ, मेरे सोना ! मुझे तो अपने मणिकूट के देवता के लिए बुरा लग रहा है । तेरी उम्र के बच्चों

का मन वह भी नहीं समझता रे !"

"पता नहीं, आप क्या सब कहते हैं... !"

"अच्छा बाखर, तूने लोगों को खेती करते देखा है न ?"

"देखा है।"

"बीज रोपते समय, हल चलाते समय, खेत की मिट्टी कोमल करते समय, धान के पौधे रोपते समय, यदि किसान कोई बड़ा नाटक खेलना चाहे, तो खेती का काम छोड़ना नहीं पड़ेगा ?"

"भला उस समय कौन नाटक खेलता है ?"

"नहीं खेलते। ठीक ही कहता है। फिर भी, यदि कोई नाटक खेले, तो क्या अभिनेता-अभिनेत्री, क्या गायक-वादक और क्या दर्शक सबको अच्छा नहीं लगता ?"

"लगता है।"

"सिनेमा देखना भी अच्छा लगता है, है न ?"

"आप कहां की बात कहां लिए जा रहे हैं, कह नहीं सकता।"

"तुम्हारी बात तुम्हें ही कह रहा हूं, बच्चा ! करो। तूने कमाया है, तू खर्च नहीं करेगा, तो क्या तेरे बटुए का पैसा मैं खर्च करूंगा ? पर एक बात है, समझते हो बाखर ? यह देख, मेरा कलेजा। धक-धक कर कहना चाहता है कि तुझे नशा चढ़ गया है।

हां, नशा ! मजे करने का नशा ! एक बार वह नशा लग जाए तो जेब खाली हो जाएगी। कितनी तकलीफ से तूने अपनी मां के चेहरे पर रौनक ला दी है। छोटे भाई-बहनों की देह पर कपड़े दे सका है। हमारे वंशीगोपाल सब देख रहे हैं। अभी तू अपने घर को ही थोड़ा और रौशन कर। वह सब भी करोगे। नहीं क्यों करोगे ? देंगे, वंशीगोपाल शक्ति देंगे। तू साइकिल खरीद, पर केवल हाट ही किया कर। तू साइकिल ले आ, मैं दो टोकरियां लटकाने के लिए सामान बना दूंगा। हां, बोझा लादकर साइकिल चलाते समय तू यदि किसी तरह सूखी नदी में डुबकी लगाने लगा तो ?" बाखर की हंसी फूट पड़ी। नामघरैया की आंखों की अश्रुधारा ने क्षणभर के लिए उसे भी अचरज में डाल दिया। साइकिल खरीदने का एक बहाना मिल गया है। कीमत भी एक साथ नहीं देनी पड़ेगी। किसी को आपत्ति नहीं। असल बाधा तो नामघरैया की ओर से थी। ठीक भी है, उस दिन सोमेश्वर ने एक बार में दस रुपया खर्च डाला। इच्छा होते ही दस रुपया, पांच रुपया खर्च करने की उसकी स्थिति नहीं हुई, यह बात आज तक कोई इतनी आसानी से समझा न पाया था। जितनी आसानी से नामघरैया के आंसुओं ने समझा दिया। बात दबी पड़ी थी। नामघरैया रास्ते में देखने पर भी बाखर से कुछ न पूछता। साइकिल कोई समस्या बनी न थी। साइकिल को लेकर उठने वाली दूसरी बातों के लिए ही बाखर की मां के मन में कोई संदेह पैदा हो गया था। वह समझ ही न पाई कि ठीक क्या है। रुद्र ऐसी बातों में पड़ता ही नहीं। खासकर, बाप होकर भी बाखर पर अधिकार जताने की योग्यता

वह बहुत पहले ही खो चुका था ।

नामघरैया की तो बात ही नहीं । किसी की बात में वह पड़ भी नहीं सकता और छोड़ भी नहीं सकता । बाखर की तरह एक टुटपुंजिया व्यापारी के लिए साइकिल बड़े काम की चीज होगी, यह नामघरैया अच्छी तरह समझता । हां, बाखर की अभिलाषा में दो-एक छोटे-छोटे पंख लगना ही उसे कुछ अच्छा न लगा । इतनी तकलीफ से कमाया पैसा सिनेमा देखने चाय-मिठाई खाने के विलास में खर्च करने का उसका समय अभी हुआ नहीं । उसके लिए अभी काफी है समय ।

बाखर का विचार है कि समय आ ही गया है । उसके साथ कई हाट करने वाले साइकिल ले चुके हैं । धन की साइकिल ही जरा खराब है । जल्दी-जल्दी खराब हो जाती है । राजेन की सबसे अच्छी है । तेजी से चलाने पर कान की बगल से गुजरनेवाली हवा की सों-सों आवाज बड़ी भली लगती । बाखर ने चला कर देखी है । बोझा ढोना भी मुश्किल नहीं । रतन पतले बोरे में भरकर माल लाता । कैरियर पर साइकिल के पुराने ट्यूब से बांधकर लाता । थोड़ा भी हिलता-डुलता नहीं । वह क्यों नहीं कर सकेगा भला ? पर उसने एक बुरा काम कर डाला । शहर जाने का असल मतलब बताकर उसने भूल की । मां हमेशा आशंका करती रहेगी ।

"मां का मन है, समझते हो, बाखर ? कोख का बच्चा किसी कारण से कुमार्ग पर जा सकता है, मां का मन पहले ही आभास पा जाता है । तूने किस बुरी साइत में पड़कर सोमेश्वर का साथ दिया था ?" नामघरैया ने बाखर से पूछा ।

"मैं उसके पास नहीं गया था, भैया ! हाट खत्म होने पर वही हमेशा मिला करता और पूछा करता कि कारोबार कैसा रहा ? मैंने इन सब बातों से अपने को बहुत बचाए रखा ।"

"कहीं तू अपने कारोबार का सारा भेद उसके आगे बक तो नहीं दिया करता ?"

"सभी नहीं बकता । तब भी कभी-कभी... ।"

"जब से तू हाट जाने लायक हुआ है, तब से आज तक मैंने तुमसे कभी भी तुम्हारे हानि-लाभ की बात पूछी है ?" बाखर चुप रहा ।

"उन कूट बुद्धि लोगों के फेरे में मत पड़ना, समझता है । वे लोग हमेशा मीठी-मीठी बातें करके तुम जैसे बुद्धू से भेद उगलवा लेंगे । और उसके बाद जिधर उनकी सुविधा होगी, तुझे उधर ही झुका लेंगे । तू फेर में पड़ जाएगा । छोड़ दे, मेरे बबुआ ! उनलोगों का साथ छोड़ दे ।"

"यदि भाग्य में है, तो कौन किसका क्या छीन सकता है, भैया ?"

"हां, भाग्य में लिखा हो, तब तो बात दूसरी जरूर है । केले, पपीते, जलपाई और ओ नींबू[1] के पेड़ तेरे ही भाग्य में नहीं हैं ? वहीं से तोड़कर केवल तू ही चुन नहीं लेता और

1. नींबू की एक प्रजाति ।

हाट में नहीं बेच डालता। जमीन तैयार करके किसी को वे सब रोपने की जरूरत नहीं पड़ती है न ?"

बाखर नामघरैया की बात का ओर-छोर तुरंत समझ न पाया।

"तब साइकिल नहीं खरीदूं ?"

"साइकिल क्यों नहीं खरीदेगा ? सुविधा से मिल रही है, तो साइकिल खरीद ले। तुझे सुविधा होगी। पर हां, उसे लेकर हवाखोरी करते नहीं फिरना। यही असल बात है। इसे ही याद दिलाते रहने के लिए जा, वंशीगोपाल से एक बार विनती कर आ।"

"बाखर उद्यमी लड़का है। बड़ा तेज भी है। बहुत अभिलाषी है वह। तो भी, मन-मुताबिक सारे काम नहीं कर सकता। साधन की कमी है। ताकत बढ़ाने के लिए अनथक चमक-दमक देखते ही बौरा जाता है।"

बाखर साइकिल ले आया। जिस दिन पहली बार बोझा लादकर हाट जाने लगा, मां ने बार-बार कहा कि धीरे-धीरे चलाना। दूर पर गाड़ी-मोटर देखते ही उतर जाना और लौटकर जल्दी आ जाना।

नामघरैया सड़क पर निकल आया और उसे देखते हुए मुंह फाड़कर हंसा और कहा, "देखो-देखो, यही है हमारा बाखर सौदागर।"

नामघरैया ने बाखर के मां-बाप दोनों को खबरदार कर दिया था कि उससे शहर जाने-न जाने की बात कुछ मत पूछे। रुद्र को तो इस बारे में कुछ लेना-देना ही नहीं है, मां के मन में ही 'स्नेहात पाप शंका' कहावत चरितार्थ होती रहती है। नामघरैया उसे भी समझाया करता, 'आपुनि वयस हैले बुद्धि हैबोभाल।' हालांकि उसकी चाल-ढाल देखकर थोड़ी शंका हुई थी, पर पत्थर के देवता के अलावा शायद और कोई बाखर की मां के मन की आशंका समझ नहीं पाया। नामघरैया की आंखों के आंसू ने एक बड़ी अनहोनी से बाखर को बचा लिया।

एक दिन सोमेश्वर ने उससे शहर में हंसी-हंसी में पूछा, "अरे बाखर, अमृत पीएगा ?"

"अमृत ?"

"अरे शराब, शराब।" बाखर डर गया। उसका डर देखकर सोमेश्वर ने उसे चिढ़ाया। सोमेश्वर की कई बातें उसके कानों में कई दिनों तक झंकृत होती रहीं।

"इतना बुद्धू बने मत रहो। नहीं तो, मां का दूध ही पीता रह। बैल कहीं का...।"

बाखर ने यह बात किसी से नहीं कही। कहने की बात भी न थी। उसके अंदर आदमी बनने की जो आकांक्षा थी, वही प्रबल होती गई।

एक दिन हाट करने के बाद नामघरैया के मन में आया कि झोला बाखर को ही दे देगा। वह लौटते समय साइकिल से ले जाएगा। लेकिन बाखर अपनी जगह पर था नहीं। लौट तो नहीं गया ? नामघरैया को थोड़ी चिंता हुई। इधर-उधर मालूम करने चला, तो देखा कि एक ओर रास्ते के किनारे कुछ लोगों की भीड़ है। वह नजदीक गया तो उसने सुना कि भीड़ में से कोई किसी से

पूछ रहा है, "मुझे रुपए-पैसे होंगे न ? इसमें क्या लिखा है।" आवाज बाखर की थी। नामघरैया हुजूम में घुस गया।

ज्योतिष-चर्चा चल रही थी। माथे पर बड़ा-सा टीका लगाए एक ज्योतिषी एक कागज पढ़ता और कहता जा रहा था। "लिखा है कि आर्थिक लाभ की आशा है। संचय का योग शुभ है। बंधु और आत्मीय लोगों से सहायता पाने का योग अच्छा है।"

"मतलब ?"

"मतलब... ।" दुहराकर वह कुछ कहना ही चाह रहा था कि नामघरैया बाखर की बगल में ही बैठ गया। उसी समय उसने देखा कि ज्योतिषी के सामने एक थाक लिफाफा हैं। बगल में ही एक पिंजरा है जिसमें एक छोटी-सी चिड़िया है। हरे रंग की चिड़िया। धन चिड़ैया से भी छोटी। नामघरैया ने बाखर की पीठ पर हाथ रखा और कहा, "चिड़िया तो बड़ी मायावी है ! बाखर, तूने ध्यान दिया न ?" नामघरैया को वहां उस तरह पाकर बाखर अचरज में पड़ गया। "देख तो तूने पैसा दिया, ज्योतिषी ने एक धान खिला दिया और छोटी चोंच से तेरा भाग्य ही तेरी जेब से निकाल बाहर कर दिया।"

ज्योतिषी बातें सुन रहा था। पर बाखर के मन में संदेह हुआ। इस बीच नामघरैया ने गमछे के किनारे की गांठ खोलकर एक रुपया निकालकर हाथ में रखा और बाखर से कहा, "बैठ बाखर, फिर से भाग्य दिखलाएं।"

एक नया यजमान पाकर ज्योतिषी को अच्छा ही लगा। हाथ फैलाकर रुपया लिया और पूछा "आपका नाम... ?"

"ठहरिए, ज्योतिषी बाबा ! मैं अपना भाग्य दिखाना नहीं चाहता। इस लड़के का भाग्य ही एक बार और देख दीजिए। मैंने सारी बातें नहीं सुनी। चूंकि उसका भाग्य एक ही है, इसीलिए आपकी मायावी चिड़िया फिर से वही पन्ना निकालेगी। दीजिए, चिड़िया को एक धान खिला दीजिए।"

ज्योतिषी ने नया यजमान समझकर पहले का पन्ना तह कर रख दिया था। अब नामघरैया की बात सुनकर सकते में पड़ गया। वह ऐसी मुसीबत में पहले कभी न पड़ा था।

ज्योतिषी का असमंजस देखकर बाखर का भी साहस बढ़ा। "हां, मेरा भाग्य एक बार और पढ़ दीजिए। भैया भी सुनें।"

पास में खड़े दो-एक दूसरे लोग भी बातों का मजा ले रहे थे। सबने एक साथ कहा, "हां देखिए। एक बार और देख दीजिए। सुग्गा क्या करता है, हम भी देखें।"

ज्योतिषी डर गया। चिड़िया कभी भी वही कागज नहीं निकालेगी। धान खिलाकर कागज खींचने के लिए कहते ही पकड़ा जाएगा। सहमते हुए बाखर से कहा, "अजी, मैं तुझे एक रुपया लौटा देता हूं। लो और जाओ। एक ही आदमी का भाग्य दो बार देखना संभव नहीं। हम उस तरह नहीं देखते।"

बाखर रुपया लेने वाला था कि नामघरैया ने रोका और ज्योतिषी से कहा, "समेटो बाबा ! तुम अपना नाटक झटपट समेटो और यहां से भागो । हमारी इस हाट में फिर कभी मत आना ।"

ज्योतिषी ने अपने कागज खुद समेटे । पिंजरे को ढकने के लिए सिला हुआ खोल था, उसमें पिंजरा डाला । हाट करने आए जो लोग खड़े थे, वे लोग ठहाका लगाकर हंस पड़े । नामघरैया ने दोनों हाथ फैलाकर कुछ गड़बड़ न करने की विनती की ।

"भैया, आपके दिमाग में यह बात कैसे सूझी ?" लौटते हुए बाखर ने पूछा ।

"मैंने ख्याल किया बाखर, उसके पास भाग्य लिखे पन्ने बीस से ज्यादा नहीं । हाट आने वाले सौ-सौ लोग यदि एक-एक रुपया देकर भाग्य दिखाएं, तो उन्हीं पन्नों को उलट-पलट कर वह ठग बांचता नहीं रहेगा ? हाट में आने वाले सभी लोगों का भाग्य भला एक जैसा हो सकता है ?"

बाखर ने बात समझी और हंस पड़ा । "जतन करो बाखर, समझते हो । काम करो । उसी तरह जो होना है, होगा ।"

"पर आपने मुझे रुपया क्यों नहीं लेने दिया ?"

"छोड़ो, छोड़ो । क्या समूचा रुपया तुम्हारा ही था ? वह उसी तरह ठगी करके जीविका चला रहा है शायद । तू समझना कि एक रुपया गंवाकर एक तमाशा देखा । सिनेमा देखने के लिए रुपया नहीं देना पड़ता ?"

बाखर को लाज लगी । "देखूं, आप अपनी पोटली तो दीजिए । मैं आगे बढ़ूं । आप आते रहिए ।" बाखर आगे बढ़ गया ।

नामघरैया के चेहरे पर भी हंसी खेल गई । दोनों आंखें मूंद कर मन-ही-मन मणिकूट के भगवान का ध्यान कर कहा, 'हे भगवान, उसके साथ-साथ जाना । लड़का बहुत भोला है ।'

8

अब तक ऐसा तीन बार हो चुका है । पुरोहित ने सबके सामने आंसू बहाए । मंच के एक किनारे खड़े नामघरैया की आंखों से भी दो बूंद आंसू ढुलक पड़े । किसी का कलेजा फाड़कर निकले आंसू देख उसकी आंखें इसी तरह गीली हो जातीं ।

पुरोहित जी को बाजे-गाजे के साथ अगवानी करके लाया गया था । आज गांव में एक अनूठा उत्सव है । आस-पास के पांच-छह गांवों के लोग उमड़ पड़े हैं । जिले से भी

कई बड़े अधिकारी आए हैं। गांवों की तो बात ही क्या ! युवकों को मानो भूत सवार हो गया है। लड़कियां जहां पातीं, वहीं आम के बंदनवार लगा रही हैं। न जाने किसने उन्हें काम पर लगा दिया है। लगे सो लगे ही हैं। खिड़की-दरवाजों की तो बात ही नहीं, बरामदे के खूंटों में भी आम की डाल !

गांव के स्वास्थ्य केंद्र का उद्घाटन है। नए बने सुंदर भवन में केंद्र खोला गया है। चारों ओर कई छोटे-छोटे घर हैं। डाक्टर, नर्स वगैरह के रहने की सुविधा पहले ही कर दी गई है। और सबसे बड़ी बात, नए स्वास्थ्य केंद्र में डाक्टरी करने वाले एक युवक डाक्टर दो दिन पहले ही आ चुके हैं।

गेट पर एक बड़े कपड़े पर लिखा है। "शुभ उद्घाटन मालती माला स्वास्थ्य केंद्र।"

मेसू की मां के नाम मालतीमाला पर ही नाम देने का निश्चय किया गया था। नामघर में जो लोग उपस्थित थे, उन्हें यह नाम मान लेने में कोई आपत्ति नहीं दिखलाई पड़ी। आपत्ति नामघरैया ने ही देखी। "क्यों, वह केयूर लोग क्यों पहनें ? बाला तो स्त्रियां ही हाथ में पहनती हैं। उससे भला है कि माला बनाकर सभी लोग अपने गले में पहन डालें।" अभिनव संशोधन सबके गले में बैठ गया। "वाह नामघरैया ! अरे तू तो कालिदास को भी पीछे छोड़ जाएगा।" नंद ने अपना विचार रखा।

गहीन ने सोचकर देखा। वह माला पहनने की बात ! जीवन भर कंजूसी से रहने वाली मेसू की मां का नाम कौन जानता था ? भाग्य से ही मरने से ठीक पहले संपत्ति के लोभ में बेचारा भतीजा आया और प्रेम से नाम पुकारा था।

कल इस नवयुवक डाक्टर ने इस बात की याद इस तरह दिलाई कि हंसी आने लगी। वह पिछले दिन शाम को आया ही था। दो-तीन दिन हेमकांत के घर में ही ठहरने का निश्चय किया गया। निश्चय सार्वजनिक रूप से किया गया था। बहुतों ने आकर खबर भी की थी। एक बार नामघरैया भी दूर से देख गया था।

सुबह नामघरैया ने नहा-धोकर मणिकूट का अगला हिस्सा साफ-सुथरा किया भर था कि उसने देखा हेमकांत की छह-बर्षीया बिटिया का हाथ पकड़े-पकड़े डाक्टर अंदर आ रहा है। हेमकांत की यह बिटिया चंपा बड़ी प्यारी है। राहगीरों का भी मन होता उसे एक बार गोद लेने का। उसी ने आवाज दी। "ये कौन आए हैं, देखो नामघरैया !"

"कौन री, तितली ?" कहकर उसे चिढ़ाया और दोनों हाथ जोड़कर डाक्टर से कहा, "आइए, बैठिए।"

देखा, तो नामघरैया को बुरा लग गया। डाक्टर युवक है। उसके एक पांव में भी कुछ दोष है। कदमों में कुछ लंगड़ाहट है।

डाक्टर ने हंसकर प्रणाम किया और नामघरैया द्वारा बढ़ाई आसनी पर बैठा। फिर कहा, "आपको देखने आया हूं और यदि आप देखने दें, तो एक बार आपके पंगु वंशीगोपाल से भी मिलकर जाऊंगा।"

"श्री हरि ! इन लोगों ने आपके आगे वह सारा महाभारत कह ही डाला। हरि-हरि !"

"महाभारत क्यों कहते हैं ? कल रात देर तक हमलोग बतियाते रहे। चंपा के पिता और गांव के दूसरे बहुत लोग इकट्ठे हुए थे। सबने एक स्वर से कहा कि आपके कारण ही गांव में इतना उत्साह है।"

"धीरे-धीरे, डाक्टर बबुआ ! वे मणिकूट से सुन रहे हैं। कहेंगे कि देखो इन बुद्धुओं को, मेरे काम को ही अपना काम कहते हैं। जो कुछ भी हुआ है, डाक्टर बबुआ, सब उन्हीं का काम है।"

"वह है या नहीं, नहीं जानता। मुझे पत्थर की मूर्ति पर उतना विश्वास नहीं है।"

"ठीक ही कहते हैं। भला मेरा ही कोई विश्वास है ? किसी मूर्तिकार ने पत्थर का टुकड़ा काट-तराशकर एक वंशीगोपाल बनाया। फिर वह असल वंशीगोपाल हो सकता है भला ?"

"आप भी ऐसा ही सोचते हैं ?"

"हां तो। पर वह कभी-कभी बहुत परेशान करता है, बबुआ ! अकेले रहने पर, सोते समय, एकांत बैठे रहने पर, न जाने कैसे-कब सीने में घुस जाता और मन-प्राण बरबस खींचकर परेशान कर डालता है। पूरब की ओर जाने की बात सोचने पर पश्चिम की ओर ले जाता और पश्चिम जाना चाहने पर पूरब की ओर जाने के लिए प्रेरित करता है। निरुपाय होकर चारों खाने चित हो जाता हूं। तभी मन में एक चीत्कार उठता कि नीच नामघरैया, तू लोगों की चरणधूलि ही बना रह। उससे आगे का सपना मत देख। उसी के अनुसार यह आपलोगों की चरणधूलि बना... ।"

डाक्टर थोड़ी देर तक कुछ भी न कह सका। चंपा ने ही कहा, "मुझे खाने के लिए कुछ भी नहीं दोगे क्या, नामघरैया ?"

"क्यों नहीं दूंगा, मेरी भगवती ? एक गुच्छा केला 'मुझे खा-मुझे खा' भाव से पक कर तैयार है। आ, दो केले तोड़ लाऊं। कल परमा दो अमरूद भी दे गया है। आ।"

डाक्टर ध्यान दे रहा था। नामघर की पूजा के प्रसाद में चढ़ाने के लिए रखे केले में से ही तोड़कर नामघरैया ने चंपा को खाने के लिए दो दिए और बात अनजाने ही उसके मुंह से प्रश्न बन फूट पड़ी।"यह तितली हंसती हुई केला खाए, तो भगवान को प्रसाद चढ़ाने की कोई जरूरत नहीं, डाक्टर बबुआ ! भगवान तो पत्थर का ही है, है न ?" यह कहकर नामघरैया हंसा और सिर झुकाकर मणिकूट की ओर देखा।

डाक्टर ने जेब से पांच का एक नोट निकाला और नामघर के लिए नामघरैया को दे दिया। उसके बाद अपने स्वभाव के विपरीत वह मणिकूट के सामने गया और घुटनों के बल बैठकर सिर झुकाया। फिर उठकर एकबार हंसा और कहा, "मुझे भी ऐसा लगता है कि आपके वंशीगोपाल ही कान पकड़कर यहां ले आए हैं।"

"धत डाक्टर बबुआ, वैसा क्यों कहते हैं ? देखिएगा, आपको भी मेरा गांव अच्छा लगेगा। हमारे गांव के लोग जो बड़े अच्छे हैं।"

"समय मिलेगा तो घूम-फिरकर देखूंगा। आप भी साथ चलिएगा।"

"अभी शायद इनलोगों के यहां लौटेंगे।"

"एकबार केंद्र के सभापति से मिलने की बात सोचता हूं। आपके पुरोहित जी ...।" यह कहते ही डाक्टर के चेहरे पर हंसी खेल गई। नामघरैया ने तुरंत मतलब नहीं समझा, इसलिए उसने आपत्ति की , "आप अभी वहां मत जाइए, डाक्टर बबुआ ! पुरोहित जी इधर से निपटकर ही छुट्टी पा सकेंगे। अरी ओ तितली ! ढोल की आवाज सुनेगी न ! तभी इनको ले जाना।" चंपा ने सिर हिलाकर 'अच्छा' कहा। पुरोहित की नित्य पूजा खत्म होने पर नामघरैया ढोल बजाया करता था।

डाक्टर ने भी सहमति जताई और समय बिताने के लिए नामघर घूम-घूमकर देखने लगा। कुछ देर देखने के बाद नामघरैया से मिला और चला गया। कदमों की लंगड़ाहट इस बार भी नामघरैया की नजरों में पड़ी। क्या बात है, पूछना चाहकर भी उसने नहीं पूछा। कई डग बढ़कर डाक्टर लौटा और उसने पूछा, "कल तो आप रहेंगे ही न ?"

"रहना होगा। गांव का ही काम है।"

"गांव का ही काम नहीं है। कहते हैं कि वह भी आपके ही अनुग्रह से इतनी जल्द संभव हो पाया है। मुझे पता चला है। अच्छा, चलता हूं।" कहकर डाक्टर फिर लौट पड़ा। चंपा ने आवाज लगाई।"जाती हूं, नामघरैया !"

नामघरैया नाम बहुत भला है। छोटे-बड़े एक ही संबध के नाते पुकार सकते हैं। संबंधसूचक इतना सर्वप्रचलित नाम सुनने में नहीं आता।

नामघरैया को बहुत अच्छा लगा। गांव की बहुत दिनों की एक इच्छा पूरी हुई। नव, हेमकांत वगैरह की बातचीत उसने सुनी थी कि डाक्टर गांव में आना नहीं चाहता। पर कहां, यह डाक्टर तो आया सो आया। दो दिन पहले ही आ गया। ये ही लोग तो आदमी हैं। अब कहीं किसी को कोई गंभीर बीमारी हो तो उसे चार-पांच किलोमीटर की दूरी तय करने की जरूरत नहीं। अच्छा ही होगा। नामघरैया की आत्मा कहती है। गांव के कई सयाने-समझदार लोगों की एक कार्यकारिणी समिति भी गठित कर ली है। पुरोहित जी उसके सभापति हैं 'प्रेसिडेंट'।

डाक्टर ने सुनकर हंस दिया था एक बार। अब याद आती है, तो नामघरैया को शर्म लग जाती।

स्वास्थ्य केंद्र की स्थापना के लिए सबने मिल-जुलकर काम किया था। क्या जिला, क्या राजधानी, सभी हाकिमों से करने लायक सभी संपर्क किए गए। मेसू की मां की दी गई जमीन की लिखा-पढ़ी कर ली गई। जब समय-सीमा के भीतर कोई आपत्ति करने वाला

नहीं निकला तब लोगों ने अनायास ही नामघरैया को जमीन का मालिक बना दिया। उस तरफ से भी इंतजार करना न पड़ा। हां, मोना नाम का कोई भतीजा कहीं से टपक पड़ा था, जिसके कारण दो-एक लोगों ने सावधान कर दिया था।

उन सबसे निपटकर लोगों ने जिले के निर्देश के अनुसार एक स्थानीय समिति बनाने के उद्देश्य से शनिवारीय कीर्तन में आरंभिक विचार विमर्श किया।

किसी ने राय दी कि हमारे नामघरैया के रहते किसी और की बात क्यों सोचनी चाहिए ? उसे ही सभापति बनाएं। "तू सभापति बनेगा न, नामघरैया ?"

नामघरैया इधर-उधर, जिस-तिस काम में लगा हुआ था। उसने एक जगह रुककर पूछा, "वह क्या चीज होती है ?"

"मतलब यह कि स्वास्थ्य केंद्र तेरी जिम्मेवारी पर रहेगा। तू ही उसका मालिक होगा। तू जैसे चलाएगा, केंद्र उसी तरह चलेगा। क्या अभी नामघर तेरे जिम्मे नहीं है ?"

नामघरैया हड़बड़ाकर उठा, "ओह, नहीं चाहिए। बाबू लोग, नामघर ही बहुत है। इसी को संभालते, साफ-सुथरा करते कमर टूटने लगती है। वह केंद्र भी मेरे गले लटका देने पर मेरा बदन खींच नहीं सकता।"

कई लोगों ने मुंह पर हाथ रख हंस दिया। बड़े लोगों को भी हंसी आई, पर उन लोगों ने उसे रोक लिया। परमा बहुत होशियार है। उसने गंभीर होकर प्रस्ताव किया, "तब पंचो, यदि नामघरैया कहता है कि वह नहीं कर सकेगा, तो हम अपने पुरोहित जी को ही प्रेसिडेंट बनाएं।"

बातें खत्म होते-न होते नामघरैया को गुस्सा आ गया, "तेरे मुंह में कीड़ा लगेगा, परमा ! मुझे जो देना है दायित्व दे। पुरोहित जी को अस्पताल की जिम्मेवारी देने की बात कहता है ! तब तो पुरोहित जी को उसे साफ-सुथरा करने की भी जिम्मेवारी लेनी होगी। ऐसी बात तेरे मुंह में आई कैसे ? वह भी इस वंशीगोपाल के सामने !"

नामघरैया ने और बहुत कुछ कहा होता। पर कह न सका। इसी समय उपस्थित लोगों ने नामघर को उड़ा डालने वाला ठहाका लगा दिया।

नामघरैया ठिठक गया। उसने समझा कि कहीं उससे गलती हुई है। नहीं तो इस तरह सभी लोगों ने उसका मजाक न उड़ाया न होता। मुहर्रमी सूरत बनाकर वह लपकते हुए चला गया। बापा-दादा उठकर गए और नामघरैया के आमने-सामने होकर पूछा, "सभापति होने पर घर की सफाई करनी होगी, यह तुझसे किसने कहा ?" नामघरैया शर्माते हुए अपनी जगह पर ही खड़ा रहा। बापा-दादा ने जब बात समझाई, तब नामघरैया का मन हुआ कि अपने ही गाल पर एक तमाचा जड़ दे। पुरोहित जी का सभापति होना गांव के लिए स्वयं-सिद्ध जैसी बात है। गांव में होने वाले किसी भी सामाजिक अनुष्ठान में पहला सम्मान पुरोहित जी को प्रदान किया जाता रहा है। पुरोहित जी भी हमेशा वह सम्मान सहजता से स्वीकार करते आए हैं। इसके कारण उन्होंने कभी भी अपने को महान आदमी

नहीं समझा ।

इस बार 'मालतीमाला स्वास्थ्य केंद्र' के सभापति के लिए जब औपचारिक रूप से पुरोहित जी का नाम प्रस्तावित हुआ तब पुरोहित जी को ऐसा लगा कि उनके दिल के किसी कोने में अचानक ठेस लगी हो । उन्होंने आपत्ति करते हुए कहा, "उसमें मुझे क्यों घसीटते हो ? उन बातों का तो ओर-छोर भी मैं नहीं जानता । इसके अलावा मेरा शरीर भी जवाब देने लगा है ।"

हां । एकबार नामघर की नित्य-पूजा भी लगातार एक सप्ताह तक बेटे रमा को ही करनी पड़ी थी । पुरोहित को बुखार हो गया था ।

फिर भी लोगों ने नहीं माना । इस नए और विशेष केंद्र के पहले सभापति का पद, एक दिन के लिए भी, पुरोहित जी सुशोभित न करें, ऐसा नहीं होगा । यही पूरे गांव का विचार था ।

उस दिन युवकों ने नामघरैया को लेकर विनोद ही किया था ।

ऐसी बात भी नहीं है कि पुरोहित जी के मन की बात लोगों ने समझी ही न हो । कई लोग समझ गए थे । उनमें नामघरैया मुख्य था ।

पुरोहित जी के कंधे पर एक दुर्वह बोझ है, जो दिन-दिन बढ़ता गया और अब उनके मन-प्राण को पंगु बना डाला है । जब से पुरोहिताइन सिधारीं तभी से वह बोझ बढ़ता गया है । सबसे अधिक दुख की बात यह कि इस असहनीय दुख का बोझा किसी भी तरह से खत्म होने की कोई संभावना ही नहीं है ।

पुरोहित जी की छोटी बिटिया, जिसे सभी बवनी कहकर पुकारते हैं, जन्म के बाद से ही पोलियो-ग्रस्त है । उम्र के हिसाब से उसकी शादी की बातचीत चलाने का समय हो गया है । परंतु कोई उपाय नहीं । यही कहना होगा कि दोनों पांव हैं ही नहीं । ऊपरी हिस्से का विकास ठीक ही हुआ है । घर के अंदर ही घिसट कर चलती है । लेकिन उसकी आवाज बड़ी मीठी है ।

पर इससे क्या ? आवाज से ही कोई जिंदा नहीं रह सकता । देखभाल करने के लिए, भरण-पोषण के लिए कोई हमेशा चाहिए । उसका भविष्य क्या होगा, यह सोचते ही पुरोहित जी का कलेजा धुकधुकाने लगता । माथा पकड़ लेते । सिर चकराने लग जाता ।

ये सारी बातें तब और भी प्रबल हो गईं, जब गांव में इस स्वास्थ्य केंद्र को खोलने की बात हुई । अपनी अज्ञानता के लिए बुक्का फाड़कर रोने का मन होता । आज जिसे पोलियो कहते हैं, बिटिया की उस बीमारी के उपचार की सारी सुविधाएं उसके जन्म के समय से ही मिली होतीं, यह बात जानने के बाद पुरोहित जी अपने आप को धिक्कारते । संपर्क साधने की थोड़ी-सी भी सुविधा होती तो निरोधक टीका दिलाने की व्यवस्था की गई होती । गांव की बात ठहरी । ऐसी बातें बताने यहां कोई नहीं आता । अभी ही कुछ ज्ञान की किरण दिखाई पड़ने लगी है ।

स्वास्थ्य केंद्र में लड़के-लड़कियों को वैसे रोगों की निरोधक दवा देने की व्यवस्था होगी। अब किसी भी मां-बाप को पछताना न पड़ेगा।

यह संभावना पुरोहित जी के समय सामने नहीं आई थी। वही दुख अब आदमी को तिल-तिल कर खा रहा है। उम्र तो ढल ही गई है।

अभी-अभी आए इस उत्साही युवा डाक्टर ने पुरोहित से भेंट की। परिचय दिया। घर, माता-पिता, सगे-संबंधी की भी बात बताई। उसी बीच, बचपन में उसे भी पोलियो की तरह ही कोई बीमारी हुई थी, वह भी कहा। अच्छा इलाज कराने के कारण ज्यादा नुकसान नहीं हुआ। केवल चाल में थोड़ी-सी लंगड़ाहट रह गई। इसीलिए 'शिशु स्वास्थ्य' उसका विशेष विषय था।

डाक्टर जब बातें कह रहा था, उस समय एक बार पुरोहित जी काफी देर तक मन मारकर एकटक देखते रहे। डाक्टर कुछ समझ न पाया। बाद में होश में आने पर पुरोहित जी ने अपने असह्य बोझ के बारे में बताया। बच्ची को बिना देखे ही डाक्टर ने आजकल वैसे रोगियों के लिए प्राप्य सुविधाओं के बारे में बताया। उसके अलावा, जयपुर की तरफ कृत्रिम हाथ-पांव लगाने की व्यवस्था की बात भी कही।

पुरोहित ने अपने कलेजे को थाम लिया। उद्‌घाटन समारोह सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। गीत-संगीत, गाने-बजाने के अलावा जिले के अधिकारियों द्वारा आयोजित एक चित्र प्रदर्शनी की भी व्यवस्था की गई थी।

डाक्टर ने बच्चों की देखभाल के बारे में विस्तृत भाषण दिया। ग्रामीणों की ओर से भी दो-एक ने बात रखी। नव ने भवन के निर्माण से लेकर आज के आयोजन तक का एक प्रतिवेदन भी पढ़ सुनाया। उसमें सबने मालती देवी और नामघरैया के भी नाम सुने। उसके बाद हेमकांत की बेटी चंपा ने थाली में रखकर कैंची बढ़ाई और पुरोहित जी ने उससे एक लाल फीता काटा।

इकट्ठी हुई महिलाओं ने बार-बार 'उरूलि ध्वनि' की। किसी ने नामघर से लाए झाल कई बार बजाए। व्यस्तता के कारण किसी ने ध्यान नहीं दिया कि थकावट के कारण पुरोहित जी किनारे की एक कुर्सी पर बैठे एक हाथ से अपना सीना फिर से दबा रहे हैं।

नामघरैया आगे बढ़ा और उसने हुक्म दिया, "उठिए पुरोहित जी ! आपको घर छोड़ आऊं।"

उन्हें उठाकर ही ले गया होता, पर नहीं उठाया। रास्ते में देखकर लोग-बाग 'क्या हुआ', 'क्या हुआ' कहकर हाय-तोबा मचा देते। यथासंभव पुरोहित जी का भार अपने पर ही लिए वह उन्हें पैदल चलाकर ही ले गया। आयोजन से लौट रहे दो-एक लोगों ने पूछा था। "क्या पुरोहित जी की तबीयत ठीक नहीं ?"

घर में बिटिया घबरा गई। "पिताजी को क्या हुआ, नामघरैया ?" पूछा और जितनी तेजी से संभव था, नजदीक आई। उसके चेहरे पर भय छाया था।

नामघरैया उसकी बात की ओर ध्यान दिए बिना उन्हें चटाई तक ले गया। पुरोहित जी को उसी पर कोमलता से सुलाकर कंधे का उत्तरीय हटा दिया और फिर दोनों पांवों को हाथ से सहलाया। माथे पर तेल-पानी देने की बात कहकर वह तेजी से चला गया। बिटिया घिसटती हुई बिस्तर के पास आई। आंखें मूंदे ही पुरोहित समझ गए कि बेटी पास में आई है। मन-ही-मन एकबार डाक्टर को शाप दिया कि निरोधक की बात कहते समय उदाहरणस्वरूप अपनी बात कही सो तो ठीक। पर इस अपंग लड़की की बात कहने की क्या जरूरत थी ? वे एक बार फिर अपना कलेजा दबाने लगे। इस बार दोनों हाथों से।

क्षणभर में बात फैल गई। पुरोहित जी बिस्तर पर हैं। उधर समारोह खत्म कर युवक लोग अड्डा मारे बैठे थे। डाक्टर ने अपने लिए जो कमरा चुना था उसमें सामानों को ठीक-टाक करने के लिए गुण और नरराम को लगा दिया गया था। गुण को केंद्र का चौकीदार बहाल किया गया था। प्रस्ताव असल में रुद्र चोर ने, छिः रुद्रकांत ने दिया था।

किसी ने बाहर से गुण को बुलाया। डाक्टर को खबर देनी है।

सभी दौड़ पड़े। नरराम ने डाक्टर के हाथ का बैग लगभग झपटकर ले लिया।

बिटिया को देखकर डाक्टर ठिठक गया। इन पांवों को तो जयपुर में भी सीधा नहीं किया जा सकता। पिछले दिन पुरोहित जी को दिया आश्वासन, उसी दिन सार्वजनिक सभा में सबके सामने किया गया वर्णन सब-के-सब व्यर्थ थे, वह याद आते ही उसे शर्म आने लगी।

पुरोहित जी बचने वाले नहीं। रक्तचाप ने उन्हें बुरी तरह धर दबोचा है। डाक्टर ने अनुमान किया कि कहीं दिमाग में रक्तस्राव हुआ है। आज जिस स्वास्थ्य केंद्र का उद्घाटन हुआ है, उसमें ऐसी व्यवस्था नहीं कि कुछ सहायता की जा सके। दूर ले जाने पर भी कुछ फायदा नहीं।

प्रतीक्षा की जाए। रात बीतने की उम्मीद नहीं।

नामघरैया बैटक के एक खूंटे के पास बैठा था। दोनों घुटनों पर हाथ रखे, सिर झुकाए उसने वंशीगोपाल से हार्दिक प्रार्थना की, "हे भगवान, इस बार उद्धार करो !"

उसी स्थिति में नामघरैया कब सो गया, कोई नहीं जानता। घर के अंदर-बाहर आदमी-ही-आदमी। सभी को जैसे काठ मार गया हो। सबकी बोलती भी बंद है। गर्दन में वह बर्बर नली लटकाए डाक्टर भी कभी आया और एक कुर्सी पर बैठ गया। एक बार अचानक लोगों की हलचल बढ़ी। डाक्टर झटपट उठा और अंदर चला गया।

नामघरैया जहां बैठा था, वहीं से उसने किसी को जोर से धमकाया "रख दो भगवान, रख दो अपनी वंशी। न समय, न असमय, केवल पें-पें-पें-पें। मुंह में हंसी और हाथ में बांसुरी लिए चारों ओर केवल अनर्थ करते फिरते हो। इस असहाय बच्ची को बचपन में ही अनाथ बनाकर तुम मजे लूट रहे हो। तुम्हारा ...।

"ऐ पगला ! उठ !" किसी ने धीमी आवाज में झकझोरकर नामघरैया को जगाया। सिर उठाते ही नामघरैया ने मानो सुना कि उसके कानों में वंशीगोपाल की बांसुरी की आवाज पड़ ही रही है। शायद सबेरा हो चुका है। वाह, सुबह-ही-सुबह वंशी की टेर !

अंगड़ाइयां लेकर उठने की कोशिश करते ही नामघरैया को होश आया, यह वंशी की टेर नहीं है। अंदर बिटिया ही छाती पीट-पीट कर रो रही है।

सच, उसकी आवाज कितनी मीठी है !

9

"अरे ठानू ! अजी, इस पहली सांझ में ही तुझे दिखाई नहीं पड़ता ? तूने तो आवाज तक नहीं दी ?"

नामघरैया की बात बेकार गई। ठानू ने ध्यान ही न दिया। कतराकर पिनपिनाते हुए चला गया। नामघरैया अवाक रह गया। आज जरूर कुछ हुआ है।

ठानूराम का घर एकदम गांव के सीवान पर है। नामघरैया 'सीवानी' कहा करता। तिस पर ठानूराम का आलसी स्वभाव। नामघरैया उसे चिढ़ाया करता। 'सीवान पर सोने वाला' कहकर। उन दोनों गांवों के लोग एकदम करीबी होने के कारण कोई भी किसी को 'उस गांव का' आदमी कहकर अपने से अलग नहीं करता। नामघरैया के लिए सभी एक ही गांव के लोग हैं। इसलिए ठानू के बर्ताव पर उसे आज आश्चर्य हुआ। नामघरैया सड़क पर निकल आया था। लोग एक दूसरे को यूं ही आवाज दिया करते। आंखों से न देखने पर भी, यदि लगता कि कोई बथान में मवेशी बांध रहा है, तो उसे भी आवाज देता। "अरे ओ लखाई, गाय बांध रहे हो क्या ?"

नामघरैया कदम बढ़ाता जा रहा था। थोड़ी दूर ही उसने देखा कि ठानूराम काम से लौट रहा है। नामघरैया सोच रहा था कि वही टोकेगा 'टहल रहे हो नामघरैया ?' लेकिन टोकना तो दूर की बात, उसने जैसे कद्दावर आदमी को देखा ही नहीं।

ठानू घाट पर काम करता था, जहाज घाट पर। बड़ा अच्छा है उसका काम। किसी का आसामी नहीं। कोई नहीं कह सकता कि तनख्वाह लेने के लिए शनिवार को आना। छुट्टी मांगने की जरूरत नहीं। दिन का काम, दिन में कमाई। घर का गुजारा हो जाता। गुजारा माने अच्छी तरह गुजारा।

छोटे-मोटे व्यापारी के माल, सामान सहित गांव के लोगों के अलावा, कभी जहाज से मोटर साइकिल ठेलनी पड़ती। जहाज से दौड़कर बस में चढ़ाना और बस से सामान

उतारकर जहाज पर चढ़ाना। बस। मजूरी नगद। मोल-तोल जानने पर एक रुपए के काम के लिए दो या तीन रुपए तक झटके जा सकते हैं। किसी-किसी यात्री से सुविधा मिलने पर कभी-कभी वह ऐसा करता भी है।

इसी तरह दो पैसा बचाकर उसने घर भी बसाया। चारगांव के किसी घर की वह लड़की थी। बहुत ही सुंदर। घर भी संपन्न। दहेज में मिली चीजें ले जाते लोगों ने देखी हैं। कपड़े रखने के लिए एक तार भी दिया था। ये सारी बातें नामघरैया ने दूसरों की बातचीत से जानी थीं।

नामघरैया नहीं जानता था तो यह कि घर में होने वाली नोंक-झोंक रूप बदलकर इस तरह प्रकट होगी। नामघरैया का मन नहीं होता कि किस अभाव के कारण घर में क्या झगड़ा होता है, इसका विचार करे। आदमी को शांति से खाते-पीते, हंसते रहना चाहिए। फिर चाहे जो अफवाह उड़ती हो, उड़ा करे। यह नामघरैया और वंशीगोपाल के बीच अलिखित समझौता है। गांव के लोगों की सुख-शांति बनाए रखने का भार नामघरैया ने मणिकूट के वंशीगोपाल को दे रखा है।

नामघरैया को लगा कि टानूराम का रास्ते में उस तरह अवहेलना करके चले जाना भी एक अशुभ संकेत है। उसके बदन पर कोई चट न पड़ने पर भी मन में एक खटका लग गया कि भला क्या कारण हो सकता है?

"क्या होगा भला, नामघरैया? शायद तुझे खबर लगी हो!" नामघरैया के भीतर किसी ने कहा।

"खबर?"

"हां। टानूराम ने गांव सिर पर उठा लिया है। लेकिन तू वहीं बात खत्म करके पड़ा रह। वह सब खबर लिए बिना भी चलेगा।"

नामघरैया चुप रह गया। क्या गांव में कुछ अघट घटा है?

घटा है। इसका-उसका इशारा अब साफ होने लगा और नामघरैया ने समझा कि उसके न जानने पर भी बात गांव के बहुत सारे लोग जानते हैं। जानते हैं, इसलिए लोग नामघरैया को खबर करने आएंगे, ऐसी तो कोई बात नहीं। यहां तक कि बाखर ने भी कुछ नहीं कहा।

आखिर क्या कहेगा? टानूराम घाट पर ही शराब पीकर आता। उस समय तक शराब का प्रभाव गांव तक आया न था। आने के लिए जो सरंजाम चाहिए, वह सब तैयार हो रहा था। अभाव-कमी जैसी परिस्थितियां भी लोगों को नशे की ओर धकेलती हैं। लेकिन टानूराम के मामले में वे सब प्रमुख कारण नहीं हो सकते। लेकिन यदि टानू को कोई संगति के लिए ले जाए? साथ ले जाने वाले हमउम्रों की कमी भी नहीं। वंशीगोपाल की कृपा से अब तक किसी का भी मन उस ओर ढलका नहीं है। यही सोचता नामघरैया। लेकिन कब तक? पत्थर का भगवान रोक सकता है भला?

पर केवल वही बात नहीं है। घटना की जड़ कहीं और है। कहते हैं कि ठानू की नई बहुरिया जमीन पर पांव रखना ही नहीं चाहती। उसे गांव रास नहीं आया है। ठानूराम की तुलनात्मक दरिद्रता एकमात्र कारण नहीं है। और भी कारण हैं। दोष किसी और का ही है।

दोष है वंशीगोपाल का !

बात सुनकर नामघरैया को शरीर में खुजलाहट होने लगी। वंशीगोपाल ने उस पर क्या दोष लगाया ? झूठी बात। क्या वह मणिकूट के देवता को चुनौती दे सकती है ?

क्यों नहीं दे सकती ? जिसके पंख जितने बड़े होते, वह उसी अनुपात में उड़ता। अच्छा, कहती है कि यहां के नीति-नियम उसके गांव के नामघर से नहीं मिलते। कहती है, यहां के विधि-विधान वहां के लोग नहीं मानते।

वाह ! तो फिर उसके मां-बाप ने इस गांव में उसका विवाह ही क्यों किया ?

उसका भी कारण है। ठानूराम जो इस नामघर का सेवक है, वह बात लड़की को नहीं मालूम।

"लेकिन दोष है कहां ?" नामघरैया ने बड़ी आतुरता से पूछा।

"तुम्हें इतना तह तक जाने की क्या जरूरत है ?"

"नहीं जी, एक भी आलू सड़ जाए, तो टोकरी का सारा-का-सारा आलू सड़ जाता है। तुमलोग गांव में जहर का बीज बोने में रुकावट डालो, समझते हो ? फिर चाहे वह जिस किसी के हाथ से भी क्यों न बोया जा रहा हो।"

"तुम भी विचित्र हो। रास्ते में देखकर ठानू ने कुछ नहीं कहा, इसलिए इतनी बात कहनी चाहिए भला ?"

"नहीं, मेरे सोना ! संगीत की जड़ है ता-ना-ना-ना ! जो समझना चाहिए मैं समझ गया। तुमलोगों को जहां बांध बनाना चाहिए, बांधो। गांव को बर्बाद होने मत देना।"

देर रात तक नामघरैया सो नहीं पाया। मणिकूट के भगवान पर उसे गुस्सा है।

"वह छोकरी तुमको भी लंगड़ा समझती है, देखो तो भगवान ! और वह मां के घर से भला क्या सीखकर आई है ? यह कितना अचरज है ! जिस महापुरुष ने तुम्हें भजने का इतना सहज मार्ग बताया, उन्हीं को अपनी आंखों के आगे रखकर देखो तो, अधर्मी तुम्हीं को देख नहीं पाते। दिखा दो, भगवान ! उस गुरु को अपनी गोद में बिठाकर अपनी विश्वविजयनी हंसी दिखा दो।"

नामघरैया की पुकार भगवान ने सुनी या नहीं, पता न चला। दो या तीन दिन बाद उस विनती का ही एक दूसरा रूप प्रकट हुआ।

गोपिनी सम्मेलन था। दो महिलाएं दोपहर में ही आकर कीर्तन की व्यवस्था कर गई थीं। ठानू की मां घबराई हुई आई। हाथ में दो पान और दो सुपारी। एक रुपया भी। नामघर की ही एक थाली में रखकर चढ़ाया। घर में महाभारत छिड़ा है। ठानू और नई

बहुरिया में घोर युद्ध। बहुरिया का कर्णफूल कहीं मिल नहीं रहा है। वह ठानू को ही चोर समझती है। ठानू गुस्से से आग-बबूला हो रहा है। वह कहता है कि सोने का नहीं, सोने का पानी चढ़ाया कर्णफूल बेचकर वह एक दिन ज्यादा-से-ज्यादा एक घूंट शराब पी सकता है। कर्णफूल चुराकर ठानू घर में ही चोर नहीं कहलाना चाहता। बहू ने ही केश सुखाते हुए कहीं बाड़ी के कोने में गिरा दिया होगा।

बहुरिया भी कम नहीं। कहती है, कर्णफूल सोने का ही था। पिता ने एक सौ रुपया खर्च कर शहर में बनवाया था। खो जाने की बात ही नहीं।

ठानू ने ही किसी बुद्धि से गायब करके बेच डाला है।

फिर क्या, एक तरफ से थप्पड़, फिर घूंसा और अंत में मूसल से पिटाई की नौबत आने वाली थी।

और दूसरी तरफ से दरिद्र, भिखारी इत्यादि से शुरू करके ठानू के मां-बाप पर बहुरिया बरसने लगी।देवियो, आपलोग आशीर्वाद दीजिए कि बहुरिया की मति-गति ठीक रहे।

महिलाओं ने आशीर्वाद दिया। युवतियों में दो-एक आंचल से मुंह ढंककर हंसने लगीं और पासवाली से फुसफुसाकर कहा, "चिड़िया उड़ंतू है। लगता है, बाप ने ज़बरदस्ती बांधकर इस घर के पिंजरे में रख दिया है...।"

इन सब भीतरी बातों की खबर नामघरैया को नहीं लगी। बाद में उसने एक दिन सुना कि बहुरिया किसी दिन अकेले सुबह-सुबह शहर चली गई। ठानू ने पिछली रात बड़ी धुनाई की थी। केवल नशा ही ज्यादा था सो नहीं, कहते हैं कि वह तो एक बोतल भी घर ले आया था। उसने उसे बिस्तर के नीचे रख दिया था। पत्नी ने देखा तो हाय-तोबा मचाने लगी।

बहुत दिनों से ठानू नामघर नहीं आया। कई शनिवार बीत गए। नामघरैया ने दूर-दूर से खबर ली थी कि वह भगनीया गांव के नामघर गया था या नहीं? वहां भी गया न था। नामघरैया के मन में कांटा-सा चुभने लगा। यह नौजवान लड़का दिन-दिन अकेला पड़ता जा रहा है। बात अनर्थ कर सकती है। उसके मन का दुख किसी तरह दूसरी ओर भी पलट सकता है। है कोई जो उसे कैसे भी रोक सके? नामघरैया अपने ऊपर जिम्मेवारी लेकर कुछ कर सकता है, साहसपूर्वक कह नहीं सकता। और उसे खोजने पर ही वह आवाज देने के लिए आगे आ सकता है। वह यूं ही धरफराकर मरा करता। क्या करेगा बेचारा? इसीलिए उसकी दुविधा भयंकर है।

एक दिन ठानू काम से लौटा ही नहीं। वह कभी भी बाहर नहीं रहा करता। कभी रात में बाहर रहना भी होता, तो घर को खबर रहती। उस दिन बिना खबर दिए वह कहीं चला गया।

अगले दिन खबर फैली कि पुलिस ठानू को पकड़ ले गई है। बहू के बाप ने कर्णफूल की चोरी की रपट लिखाई थी। पुलिस घाट पर से ही ठानू को पकड़ ले गई। घटना की खबर पा सारा गांव मुरझा गया। मां-बाप की तो बात ही क्या ! नामघरैया का कलेजा भी धड़कने लगा। कई लोग इधर-उधर दौड़े। युवा डाक्टर भी थाने गया। एक गरीब आदमी की दुर्दशा देखकर वह भी बैठा न रह सका।

तीन दिन बाद सूखकर लकड़ी बना ठानू घर लौटा। दूर से ही देखकर नामघरैया ने एक लंबी सांस ली। मणिकूट का ध्यान कर सिर झुकाया। कुछ भला-बुरा हुआ है जरूर।

नामघरैया ने किसी के मुंह से कोई आवाज नहीं सुनी। उसके लिए यह एक असहनीय बात है। एक बार रास्ते में बाखर को देखा तो उसे झपटकर पकड़ लिया, "अरे, क्या हुआ, कहो तो।"

"मैं अच्छी तरह नहीं जानता, भैया ! शायद ठानू भैया ने लड़की छोड़ दी है।"

"क्यों ?"

"इस्स, वह सब बात किसी बड़े आदमी से पूछिएगा।" यह कहकर बाखर ने पिंड छुड़ाया।

अगले दिन एक बड़ा आदमी खुद ही निकल आया। हाट जाते समय रास्ते में दारोगा ने नामघरैया को बांहों में पकड़कर पूछा।"वह जो है, शायद ठानू, उसके बाप की तबीयत ठीक है न, नामघरैया ?"

नामघरैया खामोश हो गया। कहां, उसे तो पता भी नहीं है कि ठानू के बाप को कुछ हुआ है। इसलिए उसने विनयपूर्वक कहा और विनती की, "ठानू को और परेशान मत कीजिएगा, साहब ! उसने शराब की लत में पड़कर बुरा काम किया तो है, लेकिन पत्नी के कान का गहना चुराने वाला मन उसका नहीं है, साहब !"

"मैं जानता हूं, नामघरैया ! वह चोर नहीं है। लेकिन उनलोगों ने केवल कर्णफूल ही नहीं कहा है। गर्दन के, हाथ के कुल मिलाकर महारानी के पहनने लायक गहनों का हिसाब गिनाकर इजहार दिया है। तुमलोगों के हेमकांत वगैरह के पकड़ने-धकड़ने से मामला सुलटा है।"

"तो साहब, बांझ के साथ मामला निपट गया न ?"

"निपट गया ही कहना होगा। बिना मतलब के उसके बाप को ही तकलीफ हुई। समझते हो न ? थाने में ही एकबार चक्कर आने से गिर पड़ा।" नामघरैया कुछ बोल ही न पाया। ठानू के बाप के सिर चकराने का कारण जानकर उसके बदन से पसीना छूटने लगा।

"इस बार किस बात का मजाक, भगवान ?" रात सोते समय उसने अपने भगवान को टोका, "वे सब तो तुम्हारे ही भक्त हैं न ? तुमको यदि भजता ही है, तो भजने के ढंग को लेकर इस तरह तू-तू मैं-मैं भला क्यों करनी चाहिए ? जब लड़की दी है ही, तब अपने आदमी के साथ मिल जाने के लिए छोड़ क्यों न दिया ? या फिर, दरोगा की कही बात ही

सच है ?" भगवान ने मुस्कुरा दिया। उत्तर न दिया। कभी नहीं देता।

नामघरैया मन-ही-मन भुनभुनाता रहा। छिः ! पेट की बच्ची के लिए आदमी इस तरह कर सकता है ! ओह, कहते हैं कि बुद्धि काकोजान की ओर के युवक ने ही दी थी। टानू यदि छोड़ दे तो वह विवाह कर सकता है। वैसे, इस गांव के लोगों के लिए टानू को एक सीख देनी होगी।

टानू के पिता ने बड़ी कोशिश की थी कि कचहरी में चालान दिए बिना थाने में ही मामला रफा-दफा कर दिया जाए। उस ओर से दावा किया गया कि नकद एक हजार रुपया दे और उन लोगों की बेटी छोड़ देने का एक मुचलका लिख दे, तो वह पक्ष ससम्मान छोड़ देगा।

"कुछ करो, भगवान !" नामघरैया ने विनती की, "तुम खुद ही संसार के लोगों के मन में व्याप्त हो जाओ। कुमार्ग पर जाना चाहे तो उसे पकड़ लाओ। वैसा न कर हंसते रहोगे तो कोई तुम्हें याद भी नहीं करेगा। लोग तुम्हारे नहाने-सजाने के सामान फेंकने लग जाएंगे।"

कहते हैं कि थाने में बहुत धर-पकड़ नहीं की गई। हेमकांत, डाक्टर, नव वगैरह का लोग सम्मान करते। पर इससे क्या ? सारे संसार को अंधेरा समझने वाला आदमी जिद्दी हो जाए तो उपाय नहीं। गुस्से के पागलपन में पत्नी को पीटने की बात टानू ने कबूल कर ली।

एक दिन उसने नामघर में भी घुटनों के बल बैठकर शाम के समय अकेले में यह स्वीकार किया कि बुरे ग्रह के फेर में पड़कर ही टानू ने लड़की से ब्याह की सम्मति दी थी। दोष न था, ऐसा भी नहीं। ब्याह चोरी-छिपे जैसा ही हुआ। कन्या के घर में कुल मिलाकर आदमी थे ही नहीं। तभी समझना चाहिए था कि उसने शादी भले के लिए नहीं की। चुलाई[1] शराब के नशे में ही उसने ब्याह किया था।

"हे भगवान, नशा तुम खत्म कर सकते हो तो करो।"

10

किसी का ध्यान ही उधर नहीं था। सच भी है ! नामघरैया की उम्र हुई। बिहु सम्मेलन के सभी अंदरूनी झमेलों को निपटाना नामघरैया के लिए कठिन होगा। उस समय सबने वही मान लिया था। उसी के अनुसार नामघरैया की इच्छा से लेबेरा को नामघर में ही रहकर

1- चुलाकर बनाई देसी शराब।

नामघरैया की सहायता करने की अनुमति दी गई। वह भी बचपन से ही निराश्रय बना इसके घर एक महीना, तो उसके घर दो महीने रहता हुआ इतना बड़ा हुआ है। आदमी है निरीह प्रकृति का। किसी काम में लगा देने पर अच्छी तरह कर सकता है।

मदन या किसी और ने परामर्श भी दिया था कि उसका नाम बदलकर लेबेरा से 'सब-डिप्टी नामघरैया' कर दिया जाए। परामर्श एक शनिवारीय कीर्तन में दिया था उसने। कुछ समझे बिना उसने बुद्धू की तरह सबको सुनाकर कहा था, "बड़ा लंबा हो जाएगा, भैया ! पहला ही रहे।"

इकट्ठे लोगों ने हो-हो कर हंस दिया था। आज नामघरैया का प्रस्ताव सुनकर सभी चुप हो गए। कोई भी झटपट कह न सका, 'छोड़ो' फिर भी छोटे बापा ने चिढ़ाया, "तब तुम्हारा मतलब वही है। इसीलिए लेबेरा को साथ ले आया था ?"

"ऐसा नहीं है, छोटे बापा। मेरे शरीर को तुमलोग अजर-अमर समझते हो। तुमलोग बिहु में भला कम काम लेते हो ? मैं अकेले सब कुछ संभाल नहीं सकूंगा, इसलिए मदद के लिए लेबेरा को साथ ले आया था। इन पांच-छह महीने में वह नामघर के सभी काम संभालने लायक हो गया है।"

"इसका माने यह कि तू रिटायर होना चाहता है ?"

"रिटायर-फिटायर मैं कुछ नहीं जानता, बबुआ लोग, सब कोई मिलकर मेरे जाने की व्यवस्था कर दीजिए।"

"रास होने में दो महीने भी नहीं हैं। रास की भावना को भी छोड़कर तू जाना चाहता है। लौटकर आ सकते हो भला ?"

"वह सब याद दिलाते मत रहो, बबुआ ! मेरा मन कहता है, जब जाने की बात ठान ही ली, तो तुरंत निकल चलना ही ठीक है। सोचते-सोचते इतने दिन बीत ही गए। नहीं तो मैं 'हेनो जानि यत्न जैष्ठर यात्राक' ध्यान करके ही जाना चाहता था। लेबेरा को इस नामघर का दायित्व सौंपने लायक बनाने के लिए ही रुका रहा।"

"पर तू अकेले जा सकेगा ?"

"मैं अकेले जाऊंगा, समझते हो। दूसरे के कंधे पर जाने का मन नहीं।"

"तब दिन और तारीख ठीक करो और निकल जाओ।" हेमकांत ने राय दी।

नामघरैया जगन्नाथ दर्शन करने जाएगा। सुविधा पाकर वह कई बार कह चुका है। उस महाक्षेत्र में जाने की उसकी बड़ी ललक है। एक बार उसने सोचा था कि किसी को कुछ बताए बिना ही खिसक जाए। पर वैसा कर न सका। वह चुपचाप नामघर छोड़कर चला जाएगा तो सब को बड़ी मुसीबत होगी। "और भगवान। एक बार तुम्हारी वह लीलाभूमि भी देख आऊं। तुम्हीं सबकी मति स्थिर कर दो।" एक दिन रात में सोते समय नामघरैया ने भगवान को पकड़ा। बेजुबान भगवान ने नामघरैया की विनती सुनी या नहीं, उसे पता नहीं चला। वह विचलित हो उठा। उसने भुनभुनाकर कहा, "तुम हंसते हो। शायद तुम सोचते

हो कि मैं अकेला नहीं जा सकता। देखते रहना। मैं जाकर ही रहूंगा। 'संसार तरे तात निवासे, महासिद्धि होवे अति अप्रयासे' ऐसे श्रीक्षेत्र में मैं एक रात रह भी जाऊंगा। हंसो तुम, हंसने रहो। तुम ही मुझे आफत में क्यों डाल रहे हो ?" इतने पर ही उसे शायद थकान लगने लगी और नामघरैया सो गया।

नामघरैया जाएगा ही। गांव के लोग भी उसके जिद्दी स्वभाव को जानते हैं। इसलिए किसी ने आपत्ति न की। आजकल जाना भी सुगम हो गया है। कलकत्ते में ही रेल बदलने की जरूरत है। पूछताछ कर वह बदल लेगा। टिकट भी यहीं से ले सकते हैं। एक ही टिकट होगा। वह नव खरीद देगा।

किसी ने रुपए-पैसे की बात उठानी चाही थी। हेमकांत ने आंखों के इशारे से मना किया। फिर भी नामघरैया ने एक समय अपना गुल्लक उतारा और केले के एक पत्ते पर उसे उलट दिया।

सामूहिक रूप से निश्चय किया गया कि क्या-क्या पूछताछ करनी होगी, कहां क्या करना होगा, रेल में कैसे बैठेगा, खाने-पीने के लिए साथ में क्या-क्या लेना होगा इत्यादि। नव ने दो पोस्टकार्डों पर अपना पता लिख कर दिया। हेमकांत ने साथ ले जाने के लिए एक पोशाक अधिक खरीद दी। बाखर ने अपना एक झोला दिया, जिसे कंधे से लटकाया जा सकता है। पुरोहित के घर से एक बड़ा तोशक दिया गया। वही ओढ़ने का भी काम करेगा। बापा भैया ने पीतल का एक भारी लोटा दिया। वहां आवश्यकता पड़ने पर और इंतजाम कर सकने पर, उसी में एक मुट्ठी भात बना सकता है। महाक्षेत्र में दाल का प्रसाद मिलेगा। उसी से दोनों समय का खाना हो जाएगा। उसके लिए चिंता करने की जरूरत ही नहीं। उसे केवल कमर की गांठ में बांधे पैसे खर्च करते समय ही सावधान रहना होगा। पहुंचते ही, एक कार्ड पर पहुंचने की खबर के साथ पंडा का नाम-पता पूछकर लिख भेजेगा। यहां से रुपया-पैसा भेजा जा सकता है। बुद्धि असल में डाक्टर की है। पैसा को पैसा नहीं समझने वाले नामघरैया के हाथ में ज्यादा पैसे देकर भेजने पर वह तीर्थ में मुसीबत में पड़ सकता है।

यह निश्चय हुआ कि हेमकांत मोटर साइकिल से रेल-स्टेशन ले जाएगा। शाम की रेलगाड़ी है। दोपहर का खाना खाकर ही जाना होगा। उस समय भात खाए-खाए दो या तीन दिन भात खा नहीं सकेगा। बाखर ने समझा दिया है कि थोड़ा-सा कोमल चावल[1] कैसे भिगो सकता है। एक कटोरी भी दी गई। बड़ी-सी कटोरी। इसीलिए थाली नहीं दी गई।

उस दिन सुबह पुरोहित के बेटे ने नामघरैया के नाम से अलग से प्रसाद चढ़ाया। किसी ने बुलाया नहीं, फिर भी काफी लोग नामघर में एकत्र हुए। नामघरैया ने प्रणाम करने में मणिकूट में बहुत समय लगाया। दोनों आंखें पोंछता हुआ बाहर आया। लोगों ने 'हरि बोल' से उसे विदाई दी। लेबेरा ने पता नहीं क्यों, नामघरैया को प्रणाम किया। बाखर ने

1- एक प्रकार का चावल जो चिउड़ा की तरह खाया जाता है।

झोला ले लिया। नामघर की ओर बढ़कर डाक्टर ने हंसकर हाथ हिला दिया।

"अरे हेम, पुरोहित जी के घर के सामने से चलना... ।" नामघरैया ने हेमकांत से आग्रह किया। हेमकांत इसका कारण समझ गया। "होगा, चल।" नामघरैया को ठीक से बैठने के लिए कहा और मोटर साइकिल चला दी। पीछे निकल रहे धुएं से कई लोगों की आंखें नम हो गईं।

ऐसे ही समय किसी ने उरूलि ध्वनि भी की, पर मोटर साइकिल की आवाज में वह दब गई। पुरोहित की पंगु बिटिया यह जानकर कि नामघरैया उस तरफ से ही जाएगा, दरवाजे के सामने बैठी प्रतीक्षा कर रही थी। फाटक पर हेमकांत ने रफ्तार कम करके खुद ही आवाज दी। "बिटिया, तू नामघर क्यों नहीं गई ?"

"खुशी-खुशी लौटकर आना, नामघरैया... !" बच्ची ने उत्तर में नामघरैया से यही कहा। हेमकांत की इच्छा मोटर साइकिल रोकने की नहीं हुई। देरी हो जाएगी। असहाय नामघरैया ने हेमकांत की पीठ पर ही अपना सिर टिका दिया। बच्ची की मधु जैसी मीठी आवाज उसके कानों में गूंजती रही।

नामघर से एक किलोमीटर की दूरी पर उत्तर की तरफ कुमारगांव है। उसी गांव से लगभग पूरे मौजे में मिट्टी की हांडी, घैला, प्याला इत्यादि की आपूर्ति होती है। केवल मौजा ही क्यों, कई परिवार नगर के व्यापारियों को भी थोक आपूर्ति करते हैं। हलधर, योगेन और लक्षेश्वर हफ्ते में दो दिन गाड़ी से मिट्टी की तरह-तरह की चीजें ले जाते। नामघर के सामने से जाते समय नामघरैया को भी टोकते जाते।

गाड़ की माप से बांस की खपच्चियों से बने चार ऊंचे बेड़ों का एक-एक घेरा बना लिया गया है। घेरे को ठीक से बैठाकर घड़ा, सुराही, हांड़ी, प्याला इत्यादि सामान एक-पर-एक सजा कर ले जाते हैं। हचकोलों से बचाने के लिए दो चीजों के बीच में पुआल डाल देते हैं। वही पुआल बैल को खिलाते।

जाने का समय भी बंधा हुआ है। दिन में बारह बजे के बाद ही शहर के बीच से गाड़ी ले जा सकते हैं। लौटते समय रात के सात बजे के बाद। बीच में प्रवेश निषेध ! इधर भी प्रवेश निषेध, उधर भी प्रवेश निषेध। स्कूल, कचहरी, बाजार इत्यादि के लिए शहर के लोगों की सुविधा के लिए रास्ते-सड़क खुले रहने चाहिए। ठेलागाड़ी, बैलगाड़ी सड़कों पर झमेला न कर दें। इसलिए सड़कों पर काठ के फलकों पर 'प्रवेश निषेध' लिखकर खड़ा कर देते।

एक दिन हलधर ने जल्दी लौटने के इरादे से गड़मूर होते हुए बैलगाड़ी हांक दी, लेकिन इससे बैलों को तकलीफ हो जाती। उससे अच्छा यह कि उनलोगों ने नियम कर लिया कि रेलस्टेशन के पीछे वाले खुदे मैदान में तीनों जोड़े बैल खोल देंगे। उनको भी आराम मिलेगा। ये लोग भी राम भरोसे की दुकान पर लिट्टी और आलू की भुजिया खाएंगे और घर के लिए फुटकर बाजार करेंगे। बाजार एक साथ करेंगे। जिसको बाजार करना नहीं होगा, वह बैल भी देखेगा और गाड़ी भी। योगेन उम्र में सबसे छोटा है। प्रायः उस

पर ही अगोरने का भार पड़ता। वह भी आपत्ति नहीं करता। क्योंकि उतनी ही देर में वह चार बीड़ियां फूंक डालता। स्टेशन की एक दुकान से वह लपककर एक मुट्ठी बीड़ी खरीद लाया करता।

उस दिन वह बीड़ी ही खरीदने गया था कि ठिठककर रह गया। सूरज डूब चुका था। हलधर और लक्षेश्वर दोनों बाजार करने गए थे। बैलों को एक-एक मुट्ठी पुआल मुंह के आगे देकर वह अभी-अभी बीड़ी खरीदने गया था। लेकिन देखा तो, वह तो नामघरैया है। जमीन में ही बैठा दीवार पर सिर टिकाए स्थिर पड़ा है। दोनों आंखें मुंदी हैं।

"नामघरैया !" नजदीक आकर योगेन ने आवाज दी। नामघरैया ने केवल आंखें ही खोलीं। कुछ उत्तर नहीं दिया।

तब तक आस-पास के कई गांवों के लोग जान गए थे कि नामघरैया तीर्थ गया हुआ है।

"जाना नहीं हुआ जी... ।" नामघरैया ने बड़ी थकान भरी आवाज में कहा, "तुमलोगों के लौटने का समय हो गया क्या ? मुझे भी इसी गाड़ी में ले जाना।"

"ठीक है, उठो, गाड़ी तक चलें।" कहकर योगेन ने नामघरैया का एक हाथ पकड़कर खड़ा होने के लिए कहना चाहा, लेकिन बदन पर हाथ रखते ही वह घबरा गया। "अरे, तुझे तो तेज बुखार है।"

"हां तो... ।"

योगेन बीड़ी खरीदना भूल गया। नामघरैया को पकड़कर धीरे-धीरे बैलगाड़ियों के पास ले आया। जमीन पर ही बैठाकर अपनी ही गाड़ी घुमाकर पास ले आया। पीछे का बेड़ा खोल एक तरफ रख दिया। गाड़ी में बचे पुआल को फैलाकर बराबर कर दिया। उसके बाद नामघरैया को पकड़कर गाड़ी में डाल दिया और फिर हलधर वगैरह के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

नामघरैया लाचार होकर पुआल पर ही लुढ़क गया।

हलधर, लक्षेश्वर दोनों नामघरैया को देखकर अचरज में पड़ गए। वह तो जगन्नाथपुरी के लिए निकल चुका था !

हलधर ने अपनी गाड़ी तैयार की और एक लंबी रस्सी से योगेन की गाड़ी से बांध दिया। वह खुद नामघरैया के पास ही बैठ गया। नामघरैया के झोले में से सभी कपड़े निकाल लिए और उसके बदन पर डाल दिए और फिर असहाय भाव से चारों ओार देखने लगा। और कोई कपड़ा नहीं।

"चलिए, चला जाए ...।"

शहर पारकर गांव के सुनसान रास्ते पर पहुंचते-पहुंचते नामघरैया एक झपकी ले चुका था। जगने पर ही उसे पता चला कि हलधर बगल में ही बैठा है।

कमजोर आवाज में हलधर से पूछा, "रात क्या बहुत हो गई ?"

"बहुत ज्यादा तो नहीं हुई ! फिर भी दो-एक घर से बर्तन-बासन धोने की आवाज सुनाई पड़ी। शायद लोग खाना खा चुके हैं। अच्छा, अब तुम अपनी बात सुनाओ। हमारी गाड़ी धीरे-धीरे चलती रहेगी ताकि तुम्हें हचकोले न लगें। कहो तो क्या हुआ। इस तरह लौट क्यों आए ?"

"नहीं जा सका, समझते हो, हल ! वंशीगोपाल ने कान पकड़कर लौटा दिया।"

नामघरैया अपनी उल्टी यात्रा की कहानी धीरे धीरे कहता जा रहा था –

रेल में बैठाने के लिए आए हेमकांत के बाद नव और बाखर भी आए। उन लोगों के साथ गाड़ी खुलने तक बातें करता रहा। गाड़ी खुलते ही मेरा मन खोया-खोया होने लगा। 'माधवक आराधिबे मोर बैल मति... ।' इसी इच्छा से मैं निश्चय कर निकल पड़ा था। वहां जगन्नाथ की काष्ठ प्रतिमा के चरणों पर सिर झुकाकर मन-प्राण से विश्वास कर सकूंगा। 'पंच तीर्थ करि विष्णुक देखिबा, धर्म नाहि अत परे... ।'

लेकिन वंशीगोपाल ने वह भी नहीं करने दिया। गठरी-सा बना रेलडिब्बे के एक कोने में बैठे जाते हुए नींद आ गई। हाथ की पोटली पर ही सिर डालकर आंखें मूंदे जा रहा था। नींद में ही देखा कि मणिकूट के भगवान अपनी मुस्कान लिए मेरी ही बगल में खड़े हैं। मेरी ओर देखकर पूछा, 'किधर जाएगा ओ नामघरैया ?' मैंने ने उत्तर दिया 'तुम्हें देख आऊं, बलराम-सुभद्रा के साथ।'

भगवान ने कहा, 'अबे अंधे, तू मुझे गांव में ढूंढ न पाया !'

गांव में ! हां तो। अचानक मुझे ख्याल आया। मुझे तो अपने प्रत्येक काम में, प्रत्येक कदम में भगवान की उपस्थिति का अनुभव करना चाहिए था। बाखर, मेसू की मां, पुरोहित की बिटिया, इन सबके फूल की पंखुड़ी के समान मन में,डाक्टर की हंसी में, हेमकांत, नव, बलेन के लड़ाई-झगड़े में, कभी इस कभी उस घर में होने वाले यज्ञ-याग के कोलाहल में सर्वत्र अपने-अपने ढंग से व्याप्त भगवान की पदचाप का तो इस अंधे ने ख्याल ही नहीं किया। पुरोहित के चल बसने के बाद बिटिया के म्लान चेहरे पर डाक्टर ने हंसी थिरका दी थी। पुरोहित जी के साथ घटी उस दिन की घटना के लिए डाक्टर ने किसी कारण से अपने को दोषी मान लिया था। इसीलिए कोशिश करके एक तिपहिया गाड़ी मंगाकर बहुत यत्न करके बिटिया को बैठकर देखने के लिए दी। एक बार बैठकर हाथ से उसे चलाने लगी। तो बिटिया के चेहरे पर आनंद की जो आभा फूट पड़ी थी, मैं क्या उसे भूल पाऊंगा ?

और नामघर के स्कूल से सटे लड़के-लड़कियां ? क्या मैं नहीं जानता कि उनमें भगवान का वास है ?

मेरी ऐसी कृतघ्नता के लिए भगवान को कोप हुआ। पत्थर का एक हाथ बढ़ाकर मेरा एक कान ऐंठ दिया। मुझे लगा कि कान अब उखड़े, अब उखड़े। तकलीफ से आह-उह करते ही भगवान अंतर्धान हो गए। मैं भी जग पड़ा। जगने पर ही मुझे पता चला कि रात में नींद में और रेल के हचकोलों से किसी तरह मेरा सिर लुढ़ककर पीतल के लोटे

पर पड़ गया था और एक किनारे पर मेरा कान पड़ गया। उसी के दबाव से कान अब उखड़े अब उखड़े होने लगा था। जगने पर हाथ कान पर रख मैंने धीरे-धीरे सहलाया।

दूसरे की नाक सहलाने पर बुद्धि तेज होती है। मैंने अपने ही कान सहलाते हुए याद किया कि 'बिदूरते था कि यिटो प्रतिदिने कृष्ण कीर्तन करे।'

सबेरा हो चुका था। उजाला होने पर साहस भी थोड़ा बढ़ा। सिर इधर-उधर कर देखा। सामने की बेंच पर एक स्त्री गोद के बच्चे को डरा रही थी। ठीक उसी समय गाड़ी किसी बड़े स्टेशन पर रुकी। थोड़ी ही देर में धरती कंपाती हुई एक दूसरी रेल उल्टी दिशा से उस स्टेशन पर आ रुकी। बाहर के कान फाड़नेवाले कोलाहल के बीच भी मैंने सुना कि वह स्त्री बेटे से कह रही है, 'तंग करोगे तो वह लौटने वाली रेल देखते हो न ? उसी में बैठा दूंगी, घर पहुंच जाओगे।'

एकबार उस रेल की ओर तिरछी नजर से मैंने देखा। उसके बाद उस स्त्री की तरफ उठ कर गया और कातर भाव से पूछा, 'मांजी, वह रेल उस स्टेशन होकर ही जाएगी न, जहां से मैं चढ़ा हूं ?'

जिस स्टेशन से मैं चढ़ा था, उसका नाम पूछकर स्त्री ने हंसते हुए कहा, 'जाएगी। वह रेल इसी गाड़ी की लौटती गाड़ी है। क्यों पूछा आखिर ?'

मैंने उत्तर न दिया। एक हाथ से झोला और दूसरे हाथ से कान झाड़कर अपनी रेल से उतर उस रेल की ओर लपका। इतने में ही मेरा कलेजा धड़कने लगा। क्या पता, छूट ही जाए।

'घर मुंही रेल ने शाम को ही पहुंचा दिया। समझते हो, हल !' –

बातें कहते नामघरैया के मुंह की आवाज़ बैठ-सी गई थी।

"लेकिन बुखार कब से हुआ ?"

"कह नहीं सकता, समझते हो ! जाते समय ही शरीर में कुछ कमजोरी लग रही थी। फिर भी, एक बात है, हल ! मेरी देह छूकर कसम खा, मुझे रात में उतारकर किसी से कुछ नहीं कहोगे। रात में सब परेशान हो जाएंगे। मुझे नामघर पर ही उतार दोगे। मैं चटाई बिछाकर चुपचाप सो जाऊंगा। सबेरा होते-होते ही ठीक हो जाऊंगा। तुमलोग किसी को जगाओगे नहीं।"

हलधर ने इसका विरोध किया तो नामघरैया ने उसे कसम दिलाई।

नामघर पहुंचते-पहुंचते गांव नीरव हो चुका था। लेबेरा भी सो गया था। योगेन और हलधर ने नामघरैया को पकड़कर नामघर की दहलीज पर बैठा दिया। लक्षेश्वर ने पीछे के दरवाजे से जाकर वह दरवाजा खोल दिया। नामघरैया ने हाथ के इशारे से उनलोगों को चले जाने के लिए कहा। अब तक लक्षेश्वर ने दो आसनियों को जोड़कर लंबा बिछा दिया और नामघरैया को सोने के लिए बुलाया। उसने धीरे से कहा, 'गाड़ी से थोड़ा पुआल ला दे ?'

सिर हिलाकर नामघरैया ने कहा, नहीं चाहिए। उसके मुंह से आवाज निकल ही नहीं रही है। उसे ऐसा लगा कि उसका कलेजा किसी चीज से भारी-भारी हो रहा है। ये लोग चले जाएं तो भला। उसे भगवान से बातें करनी हैं।

नामघरैया ने मणिकूट की ओर देखा और मन-ही-मन भगवान को धमकाया। मुंह खोलकर बात कहने की उसकी शक्ति नहीं रह गई है।

"मैं लौट आया, भगवान ! तुमने इतना गोलमाल न किया होता, तब भी होता। मैं मूढ़मति, महा अपराधी हूं। तुम्हें ढूंढने रेल-मोटर से तीर्थ निकला था। अब समझ पाया हूं, कितनी बड़ी भूल की। यह लो, तुम्हारी देह तुम्हें सौंप दी। ठहरो, नामघर को अशौच होने नहीं दूंगा।" यह कहकर नामघरैया कांपते हुए दरवाजे की ओर घिसटते हुए बढ़ा।

नामघरैया और बाखर के कलेजे किसी अनदेखी डोर से बंधे थे। संसार के पंडित लोग चाहे कैसी भी व्याख्या क्यों न करें, इस डोर में खिंचाव होते ही दोनों समझ जाते। इसलिए बाखर की आत्मा को आभास जरूर मिल गया था। बाकी दिनों से पहले जगकर घर से बाहर आया और सीटी बजाते-बजाते नामघर की ओर बढ़ने लगा। मन में सोचा, थोड़ा टहलेगा और नहाकर एक ही बार घर लौटेगा। उसने थोड़ी दूर से ही देखा कि नामघर के दरवाजे के सामने कोई आदमी बाहर से ही घुटनों के बल प्रणाम कर रहा है। इस झुटपुटे में खाली बदन में वह भक्त कौन हो सकता है ? वाह, नामघर का दरवाजा भी खुला है।

कई कदम आगे बढ़ने पर घुटने के बल बैठे आदमी की पीठ बाखर को जानी-पहचानी-सी लगी। उसके कदम ही तेज नहीं हुए, बल्कि धमनियों में बहने वाला खून भी तेजी से दौड़ने लगा। वह लगभग छलांग लगाते हुए पहुंचा और नामघरैया के पीछे खड़ा हो गया। वह कुछ देर विस्मय से नामघरैया की पीठ देखता रहा कि वह प्रणाम पूरा कर ले। लेकिन समय ज्यादा लगते देख उसने धीमे से कहा, "भैया... !"

नामघरैया की ओर से कोई उत्तर न मिला। हाथ हिला-डुलाकर ही उसने कुछ इशारा किया होता। कुछ पल और ठहरकर बाखर ने फिर आवाज दी, "क्या हुआ भैया, तुम लौट क्यों आए ?"

नामघरैया को कोई खबर ही नहीं। बाखर को लगा कि उसका शरीर पसीना-पसीना हो रहा है। नामघरैया की पीठ पर हाथ रखकर वह फिर आवाज देना ही चाह रहा था कि बाखर ठिठक गया। नामघरैया एक ओर लुढ़क गया। होश का कोई लक्षण ही न था।

बाखर बड़ी व्याकुलता से चिल्ला उठा "लेबेरा !" लेबेरा भंडार में सोया करता था। नामघरैया की तरह मणिकूट के पास सोने का उसका साहस नहीं होता। सबेरा होने ही वाला है। वह तंद्रा की हालत में बिस्तर पर ही लेटा था। अपने नाम की चिल्लाहट सुनकर वह घबराकर उठ बैठा। सोचा, भूकंप आया है। छलांग लगाकर वह नीचे आ गया।

बाखर पगला-सा गया। नामघरैया की मृत देह के मुड़े अंगों को सीधा करके उसने उसे जमीन पर ही लिटा दिया और बुक्का फाड़कर रोने लगा। लेबेरा को कुछ समझ में ही न आ रहा था। दो दिन पहले ही गांव के सभी लोगों से विदा लेकर तीर्थ पर गया नामघरैया इस तरह कैसे लौट आया !

बाखर की चिल्लाहट सुनकर आस-पास के सभी घरों से लोग दौड़ आए। नव दांत साफ करते-करते बाहर निकल आया। नामघर की ओर कुछ गड़बड़ी हुई है। यह समझ झटपट मुंह धोकर वह नामघर की ओर चल पड़ा।

उस दिन भी हेमकांत के शहर जाने की बात थी। ठेके का कोई काम था। मोटर साइकिल बरामदे पर निकालकर वह फटे कपड़े से उसे साफ कर रहा था। उसे भी कोलाहल के बीच सुन पड़ा कि नामघर की तरफ कुछ हुआ है। जो काम जहां था, वहीं छोड़कर वह भी दौड़ा आया।

डाक्टर देर से उठा करता था। नरराम ने दरवाजे पर दस्तक देकर उसे जगाया। "साहब, उठिए, नामघर में कुछ हुआ है।"

जंगल की आग की तरह खबर फैल गई। इस मुंह से उस मुंह होते हुए खबर ने आस-पास के कई गांवों में तहलका मचा दिया। घबरा कर योगेन दौड़ा आया। पीछे-पीछे हलधर और लक्षेश्वर भी थे।

हलधर नामघरैया के पांवों की बगल में माथा लगाकर लुढ़क गया। वह छाती पीटकर रोने लगा, "तुमने मुझे कसम क्यों दी थी, नामघरैया ?"

सभी चकित थे। यह एक नया रहस्य था। हलधर ने रोते-रोते पिछली रात की घटना लोगों को बताई। योगेन ने गमछे से मुंह ढंककर फफक-फफककर रोना शुरू किया, क्योंकि नामघरैया ने अपनी अंतिम यात्रा उसी की गाड़ी में की थी।

डाक्टर चापाकल पकड़े अकेले खड़े होकर खुले खेत की ओर देख रहा था। दोनों आंखों से आंसुओं की झड़ी लगी थी। उधर किसी का ध्यान ही न था। हलधर की कहानी खत्म ही न हो रही थी। कही बात कह-कहकर वह छाती पीटता रहा।

बिटिया की हालत तो असह्य थी। वह किस समय अपनी तिपहिया गाड़ी से नामघर पहुंची, कोई नहीं जानता। गाड़ी से उतरकर वह नामघर की बुनियाद पर ही बैठ गई और दीवार पर सिर पटकने लगी। उसके माथे पर एक गांठ उभर आई थी।

महिलाओं और लड़कियों की रुलाई की आवाज सबसे ज्यादा थी। आकाश कंपाने वाली वह रुलाई भी सबेरे को थाम सकने में समर्थ न थी।

लोगों का तांता लगा हुआ था। कौन कितनी दूर से कैसे आया है, हिसाब नहीं। अब तक नव, हेम वगैरह ने इंतजाम शुरू कर दिया था। दूर के दो गांवों से थोड़ा रुकने के लिए अनुरोध आया। गांव के लोग एक साथ आएंगे।

दारोगा अचिंत्य डेका जीप से चौक होते हुए कहीं तहकीकात के लिए जा रहा था। इधर लोगों का तांता देखकर किसी से पूछा, क्या हुआ है। खबर पाते ही गाड़ी रोकी और सिपाही ड्राइवर को गाड़ी लौटाने का हुक्म दिया फिर से थाने की ओर। नामघर की ओर जा रहे एक आदमी को बुलाकर हेमकांत को कहलवाया कि उसके लिए इंतजार करें।

गांव की कीर्तन मंडली के अलावा, तीन और गांवों से कीर्तन मंडलियां इकट्ठी हुईं। फूल और गमछों[1] का ढेर लग गया। डाक्टर दो डिब्बा घी ले आया। दारोगा शहर से जीप में झटपट लौटा। पुलिस की वर्दी बदलना संभव न हुआ। चौक पर ही जीप खड़ी की और जूता खोलकर नंगे पांव नामघर आया। झोले में वह भी एक डिब्बा घी, दस पैकेट अगरबत्ती और थोड़ा चंदन ले आया। सिर की टोपी भी खोलकर जीप पर रख आया।

बाखर ही मुखाग्नि देगा। निश्चय लगभग अपने आप कर लिया गया था। लेकिन अरथी उठाते मुश्किल लग गई। पचास-साठ लोग लपक पड़े। उपाय न देख दारोगा को वर्दी में ही आगे आना पड़ा। उसने गांव के ही चार लोग ठीक कर दिए। यह भी परामर्श दिया कि थोड़ी-थोड़ी दूर पर ही कंधे बदले जाएं।

थोड़ी दूर के बाद दारोगा ने खुद भी कंधा दिया।

उरूलि, हरि ध्वनि, ढोल और झाल की आवाजों से कदंब के बाग के उस पार के लोगों के कान झनझना गए।

थाने का नियम ही है कि दारोगा रात में डायरी लिख रखे। दिन भर की उल्लेखनीय घटनाएं लिख ली जातीं। उस दिन की घटना एक ही थी। खासकर लोगों की अपार भीड़ की बात। उसे कैसे लिखा जाए, बहुत देर तक तय नहीं कर पाया। अंत में लिखा "नामघरैया नामक आदमी की मृत्यु हुई। उसका असल नाम मालूम नहीं। उम्र की बात भी कोई ठीक से नहीं जानता। कोई वारिस नहीं। नामघर की देखभाल करता था। उसके लिए केवल खाना ही मिला करता था। उसकी अपनी कोई संपत्ति नहीं।

लोगों के खर्चे से तीर्थ करने निकला और रास्ते से ही लौट आया था। रात ही मृत्यु हुई। मृत्यु का कारण उम्र और बुखार।

शाम के पांच बजे दाह संस्कार किया गया। इसके लिए इस थाना-क्षेत्र के प्रायः सभी गांवों के लोग इकट्ठे हुए। संख्या दस हजार से कम न होगी। आवृत्ति, दस हजार। इसके प्रति ऐसी श्रद्धा का रहस्य मालूम नहीं। मृत व्यक्ति बहुत सरल, सहज और साधारण आदमी था। तो भी...।" यहीं पर डायरी खत्म कर उसने छोटे-से हस्ताक्षर कर डाले।

❑❑❑

---

1. असम में सम्मान के लिए गमछा दिया जाता है।